सारणी 14.7 : भारत–साक्षरता (प्रतिशत) : 2011

क्र. सं.	राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेश	साक्षरता (2011)		
		कुल	पुरुष	महिला
1	आन्ध्रप्रदेश	67.70	75.60	59.70
2	अरुणाचल प्रदेश	67.00	73.69	59.57
3	असम	73.18	78.81	67.27
4	बिहार	63.82	73.50	53.30
5	छत्तीसगढ़	86.40	90.50	81.40
6	गोआ	87.40	92.80	81.80
7	गुजरात	79.31	87.20	70.70
8	हरियाणा	76.64	85.40	66.80
9	हिमाचल प्रदेश	83.78	90.80	76.60
10	जम्मू–कश्मीर	68.74	78.30	58.00
11	झारखण्ड	67.63	78.50	56.20
12	कर्नाटक	75.60	82.80	68.10
13	केरल	93.91	96.00	92.00
14	मध्यप्रदेश	70.63	80.50	60.00
15	महाराष्ट्र	82.91	89.80	75.50
16	मणिपूर	79.85	86.49	73.17
17	मेधालय	75.48	77.17	73.78
18	मिजोरम	91.58	93.72	89.40
19	नागालैण्ड	80.11	83.29	76.69
20	उड़ीसा	73.45	82.40	64.90
21	पंजाब	76.68	81.50	71.30
22	राजस्थान	67.06	80.50	52.70
23	सिक्किम	82.28	87.29	76.43
24	तमिलनाड्	80.33	86.80	73.90
25	त्रिपुरा	87.75	92.18	83.15
26	उत्तर प्रदेश	69.72	79.20	59.30
27	उत्तराखण्ड	79.63	88.30	70.70
28	पश्चिम बंगाल	77.08	82.70	71.20
	केन्द्रशासित प्रदेश			
1	अण्डमान–निकोबार	86.27	90.10	81.80
2	चण्डीगढ़	86.43	90.50	81.40
3	दादरा–नगर हवेली	77.65	86.50	65.90
4	दमन–दीव	87.07	91.50	79.50
5	रा.रा. क्षेत्र दिल्ली	86.34	91.00	80.90
6	लक्ष्यद्वीप	92.28	86.10	88.20
7	पाण्डिचेरी	86.55	92.10	81.20
	योग	74.04	82.24	65.46

भाषायी वर्ग

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में भाषाओं को प्रधानता देते हुए विभिन्न राज्यों का गठन किया गया। इससे विभिन्न भाषाओं के भौगालिक वितरण को एक नया प्रारूप मिला है। भारत एक भाषाई विविधता का देश है। विदेशी विद्वान ग्रीयर्सन के अनुसार ''देश में 1903 से 1928 तक हुए सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 197 भाषाएँ एवं 544 के लगभग बोलियाँ बोली जाती थी।'' 1961 में भारतीय जनगणना विभाग ने 1018 विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों के बारे में पता लगाया था। भारतीय संविधान में 22 भाषाएँ अनुसूचित है।

भारतीय भाषाओं को उनकी बोली एवं उत्पत्ति के आधार पर चार समूहों में वर्गीकृत किया गया है।

(1) इण्डो यूरोपीयन

(2) द्राविडियन

(3) साइनो–तिब्बतन्

(4) आस्ट्रो–एशियाटिक

देश की 98 प्रतिशत भाषाएँ प्रथम दो समूहों से सम्बन्ध रखती है। समय के साथ–साथ इन सभी भाषाओं के सापेक्षिक महत्त्व में परिवर्तन होता रहा है।

नवीं शताब्दी तक संस्कृत भाषा को प्रशासकीय भाषा का पद प्राप्त था, परन्तु आज यह भाषा उत्तर भारत में तो न के बराबर व्यवहार में आती है। यद्यपि यह सत्य है कि संस्कृत ही सभी भारतीय भाषाओं की जननी है। मुस्लिम काल में उर्दू एवं फारसी भाषाओं को महत्त्व प्राप्त हुआ। 18वीं शताब्दी में ब्रिटिश काल में फारसी व उर्दू भाषा के स्थान पर सरकारी कार्यों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाने लगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हिन्दी भारत की लोकप्रिय भाषा के रूप में एवं राष्ट्र भाषा के रूप में देश के अधिकांश भागों में बोली एवं समझी जाती है। विश्व में अंग्रेजी व चीनी मन्दरित भाषा के बाद हिन्दी तीसरी भाषा है जो 337.3 मिलियन जनसंख्या की भाषा है। देश की अन्य प्रमुख भाषाएँ में बंगाली (8.3 प्रतिशत), तेलगू (7.87 प्रतिशत), मराठी (7.45 प्रतिशत), तमिल (6.32 प्रतिशत), उर्दू (5.18 प्रतिशत), गुजराती (4. 85 प्रतिशत) लोगों द्वारा बोली जाती है। देश में अन्य प्रमुख भाषाओं में कन्नड़ (3.91 प्रतिशत), मलयालम (3.62 प्रतिशत), उड़ीया (3.35 प्रतिशत), पंजाबी (2.79 प्रतिशत), असमी (1.56 प्रतिशत) जनसंख्या की भाषा है। देश में 1 प्रतिशत से भी जनसंख्या वाली भाषाओं में सिन्धी, कोंकणी, मणिपुरी, कश्मीरी, संस्कृत व नेपाली है।

भाषाओं की प्रधानता के आधार पर गठित राज्यों में हालांकि एक प्रमुख भाषा की जनसंख्या की बहुलता है लेकिन उन राज्यों में भी अन्य भाषाओं के लोग अपनी प्रभावी उपस्थिति रखते हैं। जैसे– केरल में तमिल, तमिलनाडु में तेलगू, आन्ध्र प्रदेश में उर्दू, राज्यों में अन्य भाषाओं के लोग भी उल्लेखनीय उपस्थिति रखते हैं। वर्तमान में हिन्दी के साथ–साथ अंग्रेजी भाषा को सरकारी कार्यों में विशेष महत्त्व दिया जाता है। हिन्दी अभाषी राज्यों के लिये विशेष कर दक्षिणी भारत में अंग्रेजी अपना विशेष महत्त्व रखती है। भाषा किसी भी नृजातीय समूह की पहचान का प्रमुख संकेतक है। 2011 की जनगणना के अनुसार हिन्दी (48.69 करोड़ लोगों) (40.22 प्रतिशत) की मातृ भाषा है। प्रमुख भाषाओं के आधार पर भारत को 12 भाषायी प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है।

धार्मिक संरचना

भारतीय जनजीवन और जनसंख्या की प्रमुख विशेषता धार्मिक संरचना का होना है। इसका समाज की सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक पहलूओं पर भी प्रभाव दिखाई देता है। भारत विश्व के चार प्रमुख धर्मों की जन्मस्थली है। हिन्दू, बौद्व, जैन एवं सिक्ख धर्म इसी भूमि पर विकसित और पल्लवित होकर विश्व के विभिन्न देशों में फैले हैं। आज भी भारत में सबसे प्रमुख धर्म हिन्दू है। जिसका जन्म वैदिक काल से पूर्व का माना जाता है। इसी आधार पर भारत को हिन्दुस्तान का नाम भी दिया जाता है।

भारत में जनसंख्या के धार्मिक संगठन में बड़े स्तर पर परिवर्तन हुए हैं। 1947 में भारत–पाकिस्तान विभाजन के कारण जनसंख्या का बड़े पैमाने पर स्थानान्तरण हुआ और इसका प्रभाव यहाँ की जनसंख्या की धार्मिक संरचना पर पड़ा। विभाजन से पहले इस उपमहाद्वीप में कुल जनसंख्या का 66.5 प्रतिशत हिन्दू एवं 23.7 प्रतिशत मुस्लिम जनसंख्या थी। विभाजन के बाद यह अनुपात क्रमशः 84.1 व 9.8 रह गया। 1951 की जनगणना से स्पष्ट होता है कि इस वर्ष के पश्चात् हिन्दु जनसंख्या का अनुपात कुल जनसंख्या में घटा है और मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात बढ़ा है। 1961 में हिन्दू जनसंख्या 83.4 प्रतिशत थी जो 2001 में घटकर 80.5 प्रतिशत रह गई जबकि इसी अवधि में मुस्लिम जनसंख्या प्रतिशत 10.7 से बढ़कर 13.4 पहुँच गया। सारणी 14.8 में भारत की जनसंख्या की धार्मिक संरचना प्रदर्शित की गई है–

सारणी 14.8 : भारत : धार्मिक संरचना (प्रतिशत)

समुदाय	1961	1971	1981	1991	2001	2011
हिन्दू	83.50	82.70	82.60	82.41	80.45	79.56
मुस्लिम	10.7	11.2	11.4	11.67	13.43	14.31
ईसाई	2.4	2.6	2.4	2.32	2.34	2.36
सिक्ख	1.8	1.9	2.0	1.99	1.87	1.74
बौद्व	0.7	0.7	0.7	0.77	0.77	0.77
जैन	0.5	0.5	0.5	0.41	0.41	0.41
अन्य	0.4	0.4	0.4	0.43	0.73	0.85

भारत में वर्ष 2011 की कुल जनसंख्या का 79.56 प्रतिशत भाग हिन्दू धर्मावलम्बी है। देश में हिमाचल प्रदेश (95.43 प्रतिशत) में सर्वाधिक हिन्दू जनसंख्या तथा मिजोरम (3.55 प्रतिशत) अल्प हिन्दू जनसंख्या वाला राज्य है। जबकि 2011 के अनुसार कुल जनसंख्या में 14.31 प्रतिशत मुस्लिम धर्मावलम्बी है। इसका सर्वाधिक केन्द्रण लक्ष्यद्वीप (94.92 प्रतिशत), जम्मू–कश्मीर (66.97 प्रतिशत) तथा सबसे कम प्रतिशम मिजोरम में (1.14 प्रतिशत) है। जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक मुस्लिम जनसंख्या का निवास है। पश्चिमी बंगाल और बिहार का स्थान आता है।

प्रजातीय (नृतात्वीय) संगठन

भारतीय जनसंख्या में उन मानव प्रजातियों का सम्मिश्रण पाया जाता है जो प्रायः ऐतिहासिक काल के पूर्व से लेकर बाद के अनेक युगों में भारत में प्रवेश करती रही है। इसी कारण वर्तमान जनसंख्या उन लोगों का समूह है, जो विभिन्न प्रजातीय पृष्ठभूमि के कारण विभिन्नताएँ रखते हैं। वास्तव में भारत विभिन्न प्रजातियों का संगम स्थान है।

प्रो. पंचानन मित्रा के अनुसार निग्रोइट, आस्ट्रेलाइट प्रजातियों का मूल प्रदेश भारत था। नई खोजों के आधार पर यह निश्चित है कि मानव के पूर्वजों का आदि उदगम क्षेत्र शिवालिक का दक्षिणी प्रदेश था और बाद में यह उद्‌गम क्षेत्र उत्तर में तिब्बत–ऑक्सस प्रदेश तक फैल गया। भारत वर्ष में हिमालय के दक्षिण में स्थित शिवालिक पहाड़ियों की खुदाई के दौरान बहुत बड़ी संख्या में पशुओं और मानवों के जीवाश्म प्राप्त हुए हैं। इस तथ्य से यह प्रमाणित होता है कि मानव के मूल पूर्वजों का उद्‌गम क्षेत्र शिवालिक का दक्षिणी प्रदेश रहा है। यही कारण है कि विश्व की अधिकांश प्रजातियाँ भारत में निवास करती हुई पायी जाती है।

अनेक विद्वानों ने भारत की मानव प्रजातियों के बारे में अपने

विचार प्रकट किये हैं। जिनमें प्रो. हेडन, डी.एन. मजूमदार, बी.एस. गुहा, हरर्बट रिजले, ए.सी. हेडन, मुख्य है। इनमें भारतीय नृतत्वशास्त्री बी.एस. गुहा ने 1944 में भारत के पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग के निदेशक रहते हुए भारतीय प्रजातियों का वैज्ञानिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया। वह इस प्रकार है–

(1) निग्रिटो : यह भारत के प्रथम मूल आदिवासी के रूप में जाने जाते हैं, परन्तु कुछ पश्चिमी विद्वानों के अनुसार यह प्रजाति अफ्रीका से भारत आकर दक्षिणी प्रायद्वीपीय भू–भाग के घने जंगलों में रहने लगी। ये लोग कद में बहुत छोटे होते हैं। इनका सिर छोटा किन्तु ललाट उभरा हुआ होता है। इनके बाल सुन्दर और ऊन जैसे होते हैं। ये लोग रंग में काले होते हैं। सिर की बनावट गोल एवं मध्यम होती है। चेहरा छोटा, नाक चपटी और चौड़ी होती है। होंठ मोटे और मुड़े हुए होते हैं। वर्तमान में इनकी उपस्थित भारत में बिखरे हुए रूप में मिलती है। विशेषकर उत्तर पूर्व के अंगामी नागा और झारखण्ड के बाडगिश जनजाति इस प्रकार की विशेषता रखती है।

(2) प्रोटो–आस्ट्रेलाइट : गुहा के अनुसार यह भारत की मूल प्रजाति है, परन्तु प्रो. हटन इन लोगों को भूमध्य सागरीय प्रदेश से आया हुआ बताते हैं। वर्तमान में इनकी उपस्थिति मध्य व दक्षिण भारत के पहाड़ी वनों में मिलती है। इनके बाल गुंगराले, होंठ मुड़े होते हैं। नाटे कद के ये लोग गहरे भूरे रंग के होते हैं। इस प्रजाति ने भारतीय संस्कृति को विकसित करने में विशेष योग दिया है। मलयालम, मुण्डा, संथाल, कौल, भील इन्हीं के वंशज है।

(3) मंगोलाइड : इनका आगमन चीन व मंगोलिया से माना जाता है। इन्हीं क्षेत्रों से आकर यह प्रजाति लद्दाख, सिक्किम, लाहौल, स्पीती, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मणिपुर, मिजोरम में मिलती है। इनका मुँह चपटा, गाल की हड्डिया उभरी हुई और आंखें बदाम के आकृति की होती है। इस समूह के दो उप–विभाग है (1) पूर्व मंगोलाइड, (2) तिब्बती मंगोलाइड।

(4) भूमध्य सागरीय : इस प्रजाति का भारतीय संस्कृति में विशेष योगदान रहा है। पश्चिमी विद्वान इसे पूर्वी भूमध्य सागरीय क्षेत्र अथवा दक्षिणी पश्चिमी एशिया से भारत में आया हुआ मानते हैं। इस प्रजाति समूह के भी तीन उपसमूह है। (1) पूर्व भूमध्य सागरीय, (2) भूमध्य सागरीय प्रजाति, (3) पूर्वी भूमध्य सागरीय।

(5) चौड़े सिर वाली पश्चिमी प्रजातियाँ : भारत में पश्चिम से आकर इस प्रजाति के तीन समूह (1) एलपीनोइड, (2) डिनारिक, (3) आर्मिनोइड समूह के लोग भारत के विभिन्न हिस्सों में आकर बसे गये।

(6) नार्डिक : यह प्रजाति भारत में सबसे अन्त में आई और ईसा के दूसरी शताब्दी में देश के उत्तरी पश्चिमी भागों में बस गई।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. जनसंख्या की संरचना के अन्तर्गत ग्रामीण, नगरीय जनसंख्या, लिंगानुपात, आयवर्ग एवं साक्षरता आदि पक्षों का अध्ययन किया जाता है।
2. भारत में आर्थिक प्रगति के साथ–साथ जनसंख्या में नगरीकरण की प्रवृत्ति बढ़ रही है।
3. सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 68.80 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण तथा 31.20 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है।
4. भारत का औसत लिंगानुपात 940 स्त्रियाँ प्रति हजार पुरुष (2011) है।
5. जनसंख्या में स्त्री–पुरुष की संख्या के अनुपात को लिंगानुपात कहते है। इसमें प्रति हजार पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या की गणना की जाती है।
6. सन् 1951 एवं 1981 को छोड़कर भारत में सन् 1901 से लेकर सन् 1991 तक लिंगानुपात घटता रहा है। लेकिन सन् 2011 के बाद कुछ वृद्धि हुयी है।
7. जनगणना 2011 के अनुसार सर्वाधिक लिंगानुपात केरल (1084) तथा न्यूनतम लिंगानुपात वाला राज्य हरियाणा (877) है।
8. किसी देश की जनसंख्या में विभिन्न अवस्थाओं के मनुष्यों की प्रतिशत संख्या का अध्ययन आयु वर्ग संरचना के अन्तर्गत किया जाता है।
9. सन् 2011 में देश की कुल साक्षरता 74.04 प्रतिशत रही है तथा भारत की पुरुष साक्षरता 82.14 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 65.46 प्रतिशत रही।
10. राज्य स्तर पर केरल में सर्वोच्च साक्षरता 93.91 प्रतिशत (2011) तथा बिहार में न्यूनतम साक्षरता 63.82 प्रतिशत रही है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक

1. भारत की संथाल जनजातियाँ सम्बन्धित है–

(अ) निग्रिटों से

(ब) आद्य–ऑस्ट्रेलियाइड से

(स) पुरा–मंगोलाइड से

(द) पूर्व भूमध्य सागरीय प्रजाति से

2. निम्नांकित में से वह प्रजाति जो भारत में अन्त में आकर बसी है, वह है–
(अ) नीग्रोटो (ब) मंगोलॉयड
(स) नॉर्डिक (द) एल्पों–डिनेरिक

3. निम्नलिखित में से कौन–सा एक समूह भारत में विशालतम भाषाई समूह है–
(अ) चीनी–तिब्बती (ब) ऑस्ट्रिक
(स) भारतीय–आर्य (द) द्रविड़

4. कुल भारतीय जनसंख्या में से कितनी प्रतिशत भारतीय जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है–
(अ) 717 मिलियन (ब) 833 मिलियन
(स) 847 मिलियन (द) 853 मिलियन

5. 2011 की जनगणना के अनुसार सबसे अधिक महिला जनसंख्या वाला राज्य है–
(अ) केरल (ब) हिमाचल प्रदेश
(स) उत्तराखण्ड (द) नागालैण्ड

6. 2011 की जनगणना के अनुसार सबसे कम महिला जनसंख्या वाला राज्य है–
(अ) पंजाब (ब) हिमाचल प्रदेश
(स) उत्तराखण्ड (द) हरियाणा

7. वर्ष 2011 में हुई जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता दर क्या है–
(अ) 49.5 प्रतिशत (ब) 74.04 प्रतिशत
(स) 42.5 प्रतिशत (द) 65.38 प्रतिशत

8. हिन्दुओं का सर्वाधिक अनुपात किस राज्य में है–
(अ) उत्तर प्रदेश (ब) मध्य प्रदेश
(स) ओडिशा (द) आन्ध्र प्रदेश

9. मंगोल प्रजाति की जन्म भूमि है–
(अ) भारत (ब) इण्डोनेशिया
(स) चीन (द) मध्य–पश्चिमी एशिया

10. देश में किस राज्य में साक्षरता दर सर्वाधिक है–
(अ) गोवा (ब) केरल
(स) तमिलनाडु (द) कर्नाटक

11. 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत है–
(अ) 50 प्रतिशत (ब) 67 प्रतिशत
(स) 68.84 प्रतिशत (द) 80 प्रतिशत

अति लघूत्तरात्मक

12. सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में सर्वाधिक लिंगानुपात वाला राज्य कौनसा है?
13. सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में नगरीय जनसंख्या का राष्ट्रीय औसत क्या है ?
14. सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में न्यूनतम साक्षरता वाला राज्य कौनसा है।
15. सन् 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या का सर्वाधिक प्रतिशत भारत में किस राज्य में है ?

लघूत्तरात्मक

16. जनसंख्या संरचना से क्या तात्पर्य है ?
17. लिंगानुपात को परिभाषित करते हुए इसका महत्त्व बताइये?
18. भारत में लिंगानुपात कम होने के क्या कारण है?
19. भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् साक्षरता में वृद्धि होने के मुख्य क्या कारण रहे है?
20. सन् 2011 के अनुसार भारत के किन राज्यों में विशाल ग्रामीण जनसंख्या पायी जाती है?

निबंधात्मक

21. भारत की जनसंख्या की संरचना का विश्लेषण कीजिये।
22. भारत में ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या के बदलते स्वरूप का विश्लेषण कीजिये। नगरीय जनसंख्या में वृद्धि के कारणों को विस्तार से समझाइये।
23. भारत में साक्षरता के प्रतिरूप का विस्तार से वर्णन कीजिए।

आंकिक

24. भारत के मानचित्र में साक्षरता प्रतिशत (2011) को प्रदर्शित कीजिए।
25. भारत में 1901 से 2011 तक की साक्षरता को रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

पाठ 15

संसाधनों का वर्गीकरण, संरक्षण एवं पोषणीय विकास
(Classification of Resources, Conservation and Sustainable Development)

संसाधन संकल्पना

संसाधन एक ऐसी प्राकृतिक और मानवीय सम्पदा है, जिसका उपयोग हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में करते हैं। दूसरे शब्दों में मानवीय जीवन की प्रगति, विकास तथा अस्तित्व संसाधनों पर निर्भर करता है। प्रत्येक प्राकृतिक संसाधन मानव–जीवन के लिए उपयोगी है, किन्तु उसका उपयोग उपयुक्त तकनीकी विकास द्वारा ही सम्भव है। जिम्मरमेन ने लिखा है कि ''संसाधन का अर्थ किसी उद्देश्य की प्राप्ति करना है, यह उद्देश्य व्यक्ति आवश्यकताओं तथा सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति करना है।''

इस पृथ्वी पर कोई भी वस्तु संसाधन की श्रेणी में तभी आती है जब वह निम्नलिखित दशाओं में खरी उतरती है–

(i) वस्तु का उपयोग सम्भव हो।

(ii) इसका रूपान्तरण अधिक मूल्यवान तथा उपयोगी वस्तु के रूप में किया जा सके।

(iii) जिसमें निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति की क्षमता हो।

(iv) इन वस्तुओं के दोहन की योग्यता रखने वाला मानव संसाधन उपलब्ध हो।

(v) संसाधनों के रूप में पोषणीय विकास करने के लिए आवश्यक पूँजी हो।

उपर्युक्त दशाओं के आधार पर ही हम किसी भी जैविक, अजैविक घटक को संसाधन की श्रेणी में सम्मिलित करेंगे।

मानव स्वयं संसाधन होने के साथ–साथ संसाधनों का जनक भी है। मानव ही अपने श्रम एवं तकनीकी ज्ञान द्वारा किसी पदार्थ को मानव उपयोगी बनाकर संसाधन का निर्माण करता है। इसीलिये कहा जाता है कि संसाधन होते नहीं है, बनाये जाते हैं। वस्तुतः मानव ही संसाधनों का निर्माण करता है। इसीलिये मानव को संसाधनों का जनक कहा जाता है।

संसाधनों का वर्गीकरण

संसाधनों के विस्तृत अध्ययन के लिये इनका वर्गीकरण करना आवश्यक है, जो निम्न प्रकार है। रेखाचित्र 15.1 में संसाधनों का वर्गीकरण प्रस्तुत है।

उत्पाद के आधार पर

(अ) जैविक संसाधन : सभी प्रकार के जैविक घटकों से सम्बन्धित संसाधन कहलाते हैं। जैसे– मानव, पशु–जीव जन्तु, चारागाह, वनस्पति आदि। सभी जैविक संसाधन अपनी प्रजनन क्षमता से वंश वृद्धि कर नव्यकरणीय होने के कारण असमाप्य हैं। इनके नवीनीकरण की क्षमता व दर प्राकृतिक वातावरण के अनुसार अलग–अलग हो सकती है।

मानव व जीव–जन्तु गतिशील होने के कारण चल जैविक संसाधन तथा वनस्पति स्थिर होने के कारण अचल जैविक संसाधन है।

(ब) अजैविक संसाधन : सभी प्रकार के जड़ तथा निजीव घटकों से सम्बन्धित संसाधन अजैविक संसाधन कहलाते हैं। जैसे– समस्त खनिज, भूमि, मिट्टी, पवन, जल, सौर, ज्वारीय तथा भूतापीय ऊर्जा आदि अजैविक संसाधन है। अजैविक संसाधन प्रजजन क्षमता के अभाव में अनव्यकरणीय होने से समाप्य है। एक

संसाधनों का वर्गीकरण

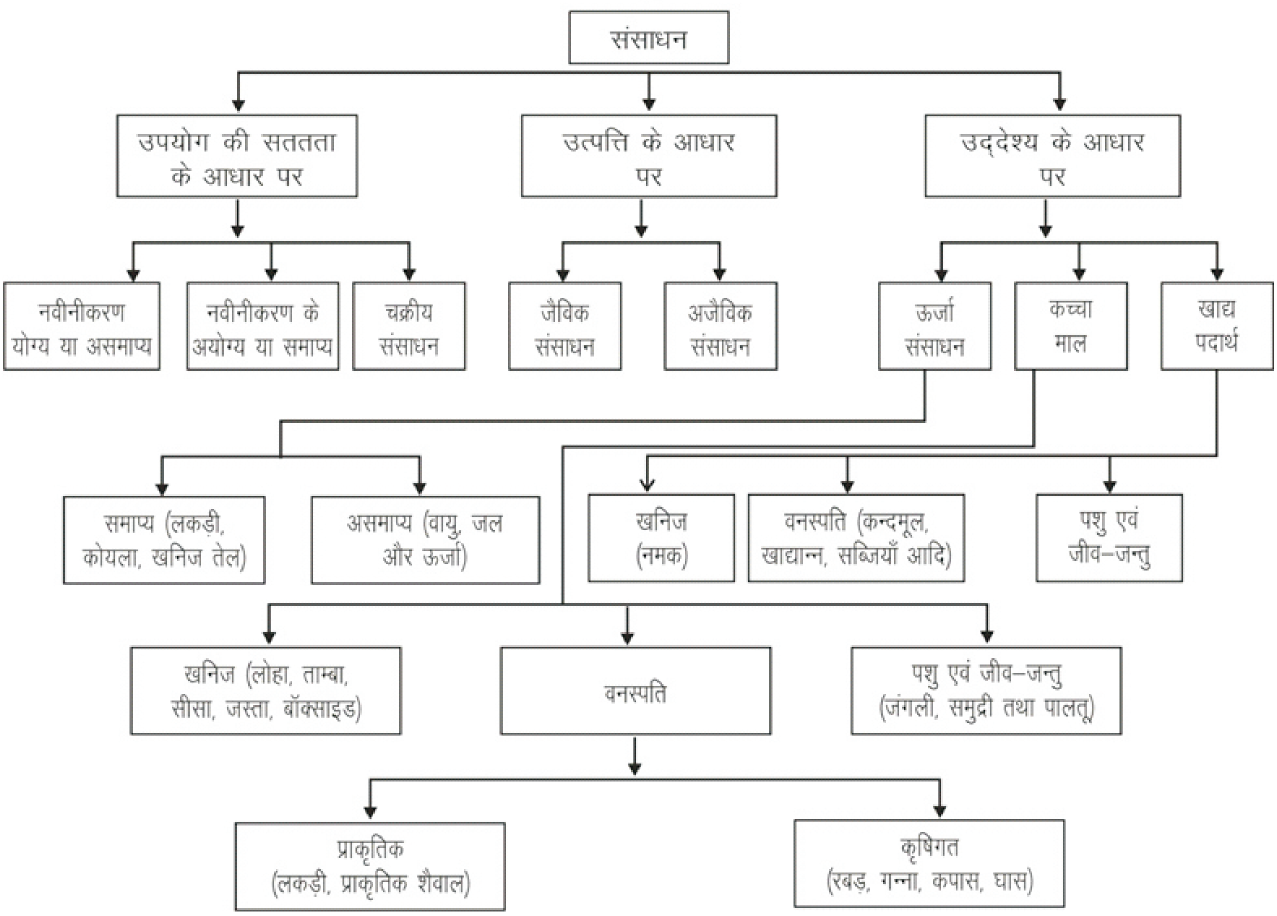

बार उपयोग करने के बाद में, हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं।

अजैविक संसाधनों की निर्माण प्रक्रिया अत्यन्त धीमी होने के कारण शीघ्र ही नवीनीकरण की सम्भावना नहीं होती है। समस्त जैविक पदार्थ निश्चित मात्रा में और निश्चित स्थानों पर ही उपलब्ध होते हैं।

उद्देश्य के आधार पर

(अ) ऊर्जा शक्ति संसाधन : जिन संसाधनों के उपयोग से ऊर्जा (शक्ति) प्राप्त होती है, ऊर्जा संसाधन कहलाते हैं। जैसे पेट्रोलियम, कोयला, परमाणु ऊर्जा, पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, मानव शक्ति और पशु शक्ति आदि।

(i) परम्परागत : जिन संसाधनों का प्राचीन काल से उपयोग किया जा रहा है, परम्परागत संसाधन कहलाते हैं। जैसे कोयला, पेट्रोलियम, जल विद्युत, परमाणु ऊर्जा आदि का प्राचीन काल से उपयोग किया जा रहा है।

(ii) गैर–परम्परागत संसाधन : जिन संसाधनों का उपयोग अभी–अभी किया जाने लगा है, गैर परम्परागत संसाधन कहलाते हैं। जैसे– परमाणु ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा और भूतापीय ऊर्जा आदि का उपयोग वर्तमान युग में किया जाने लगा है।

(ब) गैर ऊर्जा संसाधन : जिन संसाधनों का उपयोग कच्चे माल और निर्माण उद्योगों में किया जाता है, गैर ऊर्जा संसाधन कहलाते हैं। जैसे लोहा, सोना, चाँदी, टंगस्टन, एल्यूमिनियम, जस्ता, ताम्बा आदि।

उपयोग की सतता के आधार पर

(i) अनव्यकरणीय या समाप्य संसाधन : जिन संसाधनों का एक बार उपयोग होने के बाद पुनर्स्थापन नहीं किया जा सकता, उन्हें सीमित संसाधन कहते हैं। इन संसाधनों का लगातार उपयोग होने से पुनर्स्थापन नहीं होने के कारण ये शीघ्र समाप्त हो जायेंगे। इसलिए इन्हें अनव्यकरणीय या समाप्य संसाधन भी कहते हैं। जैसे– लोहा, कोयला, पेट्रोलियम आदि।

(ii) नव्यकरणीय या असमाप्य संसाधन : जिन संसाधनों का एक बार उपयोग होने के बाद मानव या प्रकृति द्वारा पुनर्स्थापन या नवीनीकरण किया जा सकता है, उन्हें असीमित संसाधन कहते हैं। पुनर्स्थापन होने के कारण इनके भण्डार कभी समाप्त नहीं होंगे। इसलिये इन्हें नव्यकरणीय या असमाप्य संसाधन भी कहते हैं। जैसे– मानव, पशु, वन, जल, पवन, सौर, भूतापीय एवं ज्वारीय ऊर्जा आदि।

स्वामित्व के आधार पर

(अ) व्यक्तिगत संसाधन : जिन संसाधनों पर किसी व्यक्ति परिवार या संस्था का अधिकार होता है, व्यक्तिगत संसाधन कहलाते हैं। जैसे– मकान, भूमि, नकदी, स्वर्णाभूषण, शारीरिक–मानसिक क्षमता, उत्तम स्वास्थ्य आदि।

(ब) राष्ट्रीय संसाधन : जिन संसाधनों पर पूरे राष्ट्र का अधिकार होता है। इन्हें राष्ट्रीय संसाधन कहते हैं। जैसे जनसंख्या, खनिज, वन, जल, पवन, सौर ऊर्जा, सैन्य शक्ति, तकनीकी ज्ञान, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध आदि।

(स) अन्तर्राष्ट्रीय या विश्व संसाधन : जिन संसाधनों पर पूरे विश्व का अधिकार हो, उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय संसाधन कहते हैं। जो मानव की समृद्धि, उन्नति और कल्याण के लिये उपयोगी है। जैसे– समस्त भौतिक और जैविक संसाधन।

संसाधन संरक्षण

संरक्षण का अभिप्राय : संसाधन संरक्षण का अभिप्राय संसाधनों के नियोजित, विवेकपूर्ण मितव्ययतापूर्ण, पुनर्भरण क्षमतानुसार विनाश रहित उपयोग से है। संसाधनों का उपयोग जनसंख्या एवं उसकी आवश्कताओं के अनुरूप विवेकपूर्ण ढ़ंग से होना चाहिए। ऐसा करने से भावी पीढ़ी के लिए संसाधनों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

संसाधन संरक्षण से अभिप्राय संसाधनों का बिल्कुल उपयोग नहीं करने अथवा कंजूसीपूर्ण उपयोग करने से कदापि नहीं है। जिन संसाधनों का उत्पादन एवं उपलब्धता कम है, उनका उपयोग परमावश्यक कार्यों में किया जाना चाहिये। जैसे विश्व में ताम्बे की उपलब्धता एवं उत्पादन कम है, इसलिये इसका औचित्यपूर्ण उपयोग विद्युत उपकरणों या मशीनों में अधिक किया जाये। अन्य कार्यों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध एल्युमिनियम को इसके प्रतिस्थापक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

अतः सभी संसाधनों का नियोजित, विवेकपूर्ण, मितव्ययतापूर्ण, विनाश रहित जनसंख्या एवं उसकी आवश्यकतानुसार लम्बे समय तक उपयोग ही संसाधन संरक्षण है।

संरक्षण की आवश्यकता

मानव के सतत् विकास के लिए विभिन्न प्रकार के संसाधनों का उपयोग आवश्यक है और संसाधनों का लम्बे समय तक उपयोग करने के लिए इनका संरक्षण भी आवश्यक है। विकास की कीमत पर संसाधनों का विनाशपूर्ण उपयोग घातक है। हमारी आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधन बचाये रखना हमारा कर्तव्य है। अतः संसाधन संरक्षण आवश्यक है। जनसंख्या की तीव्र वृद्धि से नगरीयकरण, औद्योगीकरण और वृक्षों की अन्धाधुन्ध कटाई से पर्यावरण प्रदूषण के साथ–साथ संसाधन भी समाप्त होते जा रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषण से भूमि, जल, वायु आदि ने अपनी गुणवत्ता खो दी है। आज पारिस्थितिकी तंत्र में असन्तुलन के कारण ओजोन परत में छिद्र, ग्लोबल वार्मिंग में वृद्धि, जीव विनाश और मानव की कार्य क्षमता में कमी हुई है।

अतः सभी विपरीत परिस्थितियों पर विजय पाकर सतत् विकास करने और मानव सहित सभी जीवों के लिये जीवनदायी वातावरण बनाये रखने के लिए संसाधन संरक्षण आवश्यक है।

संसाधन संरक्षण की समस्या

मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं विकास के लिये संसाधनों का उपयोग अनिवार्य है। तीव्र विकास की प्रतिस्पर्धा में मानव संसाधनों का शोषण करने लग गया है। नव्यकरणीय संसाधनों के पुनर्स्थापन की भी एक सीमा है, तत्काल उनको भी पुनर्स्थापित नहीं किया नहीं किया जा सकता। अनव्यकरणीय संसाधनों के नवीनीकरण की गति अतिमन्द होने से ये संसाधन निकट भविष्य में समाप्त हो जायेंगे। ऐसी स्थिति में संसाधनों के अभाव में हमारी आने वाली पीढ़ियाँ आवश्यकतानुसार विकास नहीं कर पायेगी। यदि कोयला, पेट्रोलियम आदि का उपयोग इसी तरह होता रहा तो आने वाले कुछ समय में ही हमेशा–हमेशा के लिये समाप्त हो जायेंगे। संसाधन संरक्षण में समस्या उत्पन्न करने वाले चार कारक संयुक्त रूप से उत्तरदायी है–

(1) जनसंख्या विस्फोट के कारण बढ़ती मानवीय आवश्यकताएँ।

(2) वैज्ञानिक आविष्कारों से औद्योगीकरण, नगरीयकरण एवं परिवहन में द्रुत वृद्धि।

(3) पश्चिमी उपभोगतावादी संस्कृति के व्यापक प्रसार से संसाधनों के अधिकतम उपभोग की प्रवृत्ति।

(4) अधिकतम विकास की प्रवृत्ति।

संसाधनों के भण्डार लगातार समाप्त होते जा रहे हैं और जनसंख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। इससे संसाधन संरक्षण एक

प्रबल समस्या बनती जा रही है कि किस प्रकार सीमित संसाधनों का उपयोग कर विकास किया जाये और लम्बे समय तक इनकी उपलब्धता भी बनी रहे।

संसाधन संरक्षण के उपाय

संसाधनों की आवश्यकता व संरक्षण की समस्या से यह तथ्य प्रमुख रूप से उभरकर आता है कि कुछ ऐसी विधियाँ अपनायी जानी चाहिये जो संसाधन संरक्षण में सहायता प्रदान कर सके। संसाधन संरक्षण में निम्नलिखित विधियाँ सहायता प्रदान कर सकती है।

(1) जनसंख्या वृद्धि पर प्रभावी नियन्त्रण : जनसंख्या किसी देश का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व आवश्यक संसाधन है। मानव आर्थिक विकास व अपने जीवन को उच्च से उच्चतर बनाने के लिये संसाधनों का उपयोग करता है। संसाधनों के अनुपात में जनसंख्या की अनुकूलतम अवस्था में बिना किसी अवरोध के आर्थिक विकास होता रहेगा, किन्तु संसाधनों की तुलना में जैसे ही जनसंख्या बढ़ती जाती है वैसे ही संसाधनों का शोषण प्रारम्भ होने लगता है। इससे अनव्यकरणीय संसाधन शीघ्र समाप्त होने लगते हैं। तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये संसाधनों की अधिक आवश्यकता होगी। अतः देश में संसाधन संरक्षण के लिये जनसंख्या पर नियन्त्रण करना आवश्यक है।

(2) नियोजन में समग्र दृष्टिकोण : नियोजन में समग्र दृष्टिकोण से तात्पर्य पर्यावरण के विभिनन अवयवों (घटकों) के समुचित उपयोग और उनके संरक्षण से है। पर्यावरण के समस्त अवयव अन्तर्सम्बन्धित है। अतः देश के विकास की योजनायें बनाने और उनके क्रियान्वयन में सम्पूर्ण पर्यावरण को एक इकाई मानना आवश्यक है। किसी भी अवयव (तत्व) की कमी या क्षरण से सम्पूर्ण पर्यावरण का सन्तुलन बिगड़ सकता है। जैसे तीव्र औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण से उपजाऊ कृषि योग्य भूमि की कमी, वन विनाश से मृदा अपरदन, उत्पादकता में कमी, चारागाहों का नष्ट होना, पर्यावरण प्रदूषण और वर्षा की कमी से जलस्तर घटने जैसी गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण से ऑक्सीजन–कार्बन–डाई ऑक्साइड चक्र में असन्तुलन के कारण जीव–जन्तु विलुप्त और समाप्त हो रहे हैं। अतः मानव कल्याण के लिये नियोजन में समग्र दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहियें।

(3) जैविक सन्तुलन बनाये रखना : औद्योगिक एवं आर्थिक विकास का उद्देश्य मानव जीवन को समुन्नत एवं सुविधाजनक बनाना है। मानव के अस्तित्व के लिये जल, वायु, मृदा वनस्पति, जीव–जन्तु आदि प्रमुख जैविक आधार हैं। अतः जैविक सन्तुलन को ध्यान में रखकर आर्थिक नियोजन से मानव पर्यावरण सन्तुलन और संसाधनों की उपलब्धता बनी रहेगी और मानव उत्तरोत्तर प्रगति करता रहेगा। जैविक असन्तुलन पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न पारिस्थितिकी असन्तुलन के कारण मानव के विकास के स्थान पर विनाश होने लगेगा।

(4) ऊर्जा के गैर–पारम्परिक संसाधनों का अधिक उपयोग : ऊर्जा के गैर पारम्परिक संसाधन नव्यकरणीय हैं। जैसे– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा आदि असमाप्य संसाधन है। ये सभी संसाधन प्रदूषण रहित और स्थापना लागत के बाद बहुत सस्ती ऊर्जा प्रदान करते हैं। गैर परम्परागत ऊर्जा संसाधनों का उपयोग कर पेट्रोलियम, कोयला और परमाणु खनिजों के संरक्षण के साथ ही पर्यावरण प्रदूषण से भी बचा जा सकता है।

(5) वैकल्पिक संसाधनों की खोज : विश्व में अनव्यकरणीय संसाधनों के भण्डार सीमित होने से विकल्पों की खोज कर उनका उपयोग करना आवश्यक है। जिससे आने वाली पीढ़ियों को संसाधन उपलब्ध हो सकते हैं। जैसे ताम्बे की उपलब्धता व उत्पादन कम होने से इसके प्रतिस्थापक एल्यूमिनियम का उपयोग अधिक किया जाना चाहिये।

ऊर्जा प्राप्ति के लिये पेट्रोलियम व कोयला के स्थान पर सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल विद्युत, परमाणु ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा व भूतापीय ऊर्जा का अधिक उपयोग किया जाना चाहिये। उद्योगों व रेल परिवहन में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता है। इसलिये इनमें तापीय ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा और जल विद्युत का उपयोग किया जायें। कम खपत के कारण सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और भूतापीय ऊर्जा का उपयोग घरेलू कार्यों में किया जाना चाहिये।

(6) प्राथमिकता के आधार पर उपयोग : सीमित और समाप्य संसाधनों का उपयोग अति आवश्यक एवं राष्ट्रीय महत्त्व के कार्यों में ही किया जाये। अन्य कार्यों में विकल्पों का उपयोग किया जाना हितकर होगा। जैसे– भारत में टंगस्टन की उपलब्धता कम है। अतः टंगस्टन का उपयोग आयुध क्षेत्र में वरीयता के साथ कर इसका संरक्षण कर सकते हैं।

(7) पुनर्चक्रण : धातुओं के स्क्रेप, कतरन या उपयोग के बाद खराब होने पर गलाकर पुनः उपयोग में लाना पुनर्चक्रण कहलाता है। यह विधि संसाधन संरक्षण की बहुत उपयोगी आवश्यक व महत्त्वपूर्ण विधि है। इस विधि द्वारा किसी भी धातु का एक बार उपयोग करने के बाद भी कई बार पुनः उपयोग किया जा सकता है। जैसे– ताम्बा, सीसा, जस्ता, एल्युमिनियम और लोहा

आदि धातुओं को गलाकर पुनः उपयोग कर संरक्षण किया जा सकता है। एल्यूमिनियम 80 प्रतिशत तक, सीसा 75–80 प्रतिशत तक और ताम्बा 65–75 प्रतिशत तक, पुनः उपयोग में लाया जा सकता है। हमारे देश में सोना, चाँदी, ताम्बा, पीतल आदि धातुओं का प्राचीन काल से पुनर्चक्रण किया जाता रहा है।

(8) कृत्रिम वस्तुओं का उपयोग : प्राकृतिक संसाधनों की बचत कर लम्बे समय तक उपलब्धता बनाये रखने के लिये कृत्रिम पदार्थों का उपयोग किया जाना चाहिये। जैसे लकड़ी के स्थान पर प्लास्टिक तथा रेल्वे लाइनों में लोहे या लकड़ी के स्लीपर के स्थान पर लोहे के सरिये, सीमेन्ट व कंकरीट से बने स्लीपर लगाकर लकड़ी व लोहे की बचत कर सकते हैं।

(9) उन्नत व परिष्कृत तकनीक का उपयोग : उन्नत व परिष्कृत तकनीक का उपयोग कर ऊर्जा और अन्य संसाधनों की बचत की जा सकती है। बहुमंजिला इमारतों का निर्माण कर भू संसाधनों की बचत की गई है। आज पाँच सितारा होटलों में विद्युत उपकरणों व अधिक ईंधन औसत देने वाले साधनों के उपयोग से ऊर्जा की बचत हुई है। चार लेन व रेल लाइनों में सुधार कर गाड़ियों की गति बढ़ाकर ऊर्जा व मानव शक्ति के समय को बचा सकते हें। आज इवाई यात्रा करने से मानव के समय की बचत हुई है। उन्नत तकनीक से अधिक उत्पादन कर उत्पादन लागत व संसाधनों और अनेक अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग ऊर्जा व उर्वरक में किया जा सकता है।

(10) संसाधनों का बहुद्देशीय उपयोग : जब एक ही योजना से कई उद्देश्य पूरे होते हैं तो उन्हें बहुद्देशीय योजनाएँ कहते हैं। इनसे संसाधनों का संरक्षण किया जा सकता है। जैसे नदियों पर बाँध बाँधने के तीन मुख्य उद्देश्यों के साथ ही कई गौण उद्देश्य होते हैं, जैसे–

- सिंचाई के लिए जल, पेयजल, विद्युत उत्पादन।
- मत्स्य पालन, बाढ़ नियंत्रण, वन विकास, मृदा अपरदन की रोकथाम, भू–जलस्तर बढ़ाना, जल परिवहन आदि।
- पेट्रोलियम (कच्चा तेल/क्रूड ऑयल) के मुख्य दो ऊर्जा उत्पाद है– पेट्रोल एवं डीजल। उनके गौण उत्पाद में मिट्टी का तेल, ऑयल, ग्रीस, वेसलीन, सिन्थेटिक पदार्थ, मोम, गोंद, कोलतार आदि का उत्पादन पेट्रोलियम के बहुद्देश्यीय उपयोग का उदाहरण है।

पोषणीय विकास

पोषणीय विकास का अभिप्राय पर्यावरण के साथ सन्तुलित, विवेकपूर्ण, मितव्ययतापूर्ण, पुनर्भरण, क्षमतानुसार, विनाशरहित उपयोग से है। जिससे वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति सतत् विकास के साथ की जा सके। पोषणीय विकास एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है, जिसे केवल विकासशील देश ही नहीं, अपितु औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश भी अपनाना चाहते हैं। सतत् विकास की इस प्रक्रिया में मानव की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ ही भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को ध्यान में रखते हुए संसाधनों का उपयोग किया जाता है। जिससे संसाधनों के मितव्ययतापूर्ण व पुनर्भरण क्षमतानुसार उपयोग एवं संरक्षण पर विशेष बल दिया जाता है।

मानव ने प्राचीन काल में आखेट युग से वर्तमान उन्नत औद्योगिक युग तक की विकास यात्रा में संसाधनों का अत्यधिक उपयोग किया है। संसाधनों के अत्यधिक विदोहन से पर्यावरण के प्राकृतिक एवं जैविक अन्तर्सम्बन्धों के मध्य सन्तुलन पर प्रभाव पड़ा है। पर्यावरण और विकास के मध्य असन्तुलन के कारण पर्यावरण प्रदूषण के दुष्परिणाम स्वरूप आज जीव–जगत का अस्तित्व संकट में पड़ गया है। पर्यावरण को हानि पहुँचाने तथा संसाधनों के लगातार समाप्ति की ओर बढ़ने से विकास की सतत् गति बनाये रखना कठिन है। इसलिये भविष्य में पर्यावरणीय दुष्परिणामों से बचने के लिये अस्थाई विकास की विचारधारा के स्थान पर स्थाई और सतत् विकास का मार्ग अपनाना होगा। जिससे हमारी वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भावी पीढ़ियों के लिये भी संसाधनों का संरक्षण किया जा सकेगा, निरन्तर विकास की संकल्पना के कारण ही पोषणीय विकास को सतत् विकास भी कहा जाता है।

जनसंख्या वृद्धि और पोषणीय विकास

संसाधनों और मानव विकास का चोली दामन का सम्बन्ध है। विकास से तात्पर्य प्रति व्यक्ति आय, औद्योगिक एवं कृषि उत्पादन में वृद्धि, समृद्ध परिवहन, उन्नत सूचना प्रौद्योगिकी, स्वच्छ पेयजल, शुद्ध वायु, आरामदेह आवास, आवश्यक वस्त्र, स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन, आधुनिक चिकित्सा, शिक्षा, मनोरंजन के साधनों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता से है। उपर्युक्त सुविधा सम्पन्न देशों का मानच विकास सूचकांक क्रमशः (1) नार्वे (0.944), (2) आस्ट्रेलिया (0.935), (3) स्वीटजरलैण्ड (0.930) देशों का है। भारत का 0.609 HDI के साथ 130 वाँ स्थान है। निम्नतम स्थान क्रमशः (1) नाइजर (0.348), सेन्ट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक (0. 350) देशों का है। विश्व का मानव विकास सूचकांक 0.711 है। इन देशों के नागरिकों ने प्राकृतिक व जैविक संसाधनों का विवेकपूर्ण विदोहन कर राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि कर जीवन समृद्ध बनाया है।

जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक विकास का स्तर बनाये रखने के लिये उन्नत प्रौद्योगिकी युक्त मध्यम आकार की औद्योगिक इकाइयों द्वारा स्थानीय स्तर पर उत्पादन आवश्यक है। कच्चे माल के स्थानीय उपयोग से रोजगार के अवसरों में वृद्धि कम उत्पादन लागत तथा समाज और राष्ट्र आत्म निर्भर बनते हैं। विकासशील देशों के पास उन्नत तकनीक द्वारा वृहत् उद्योगों हेतु पूँजी की कमी है। इसलिये मध्यम आकार की औद्यागिक इकाईयाँ उपयोगी सिद्ध होगी। भारत जैसे मानव शक्ति आधिक्य वाले देश में श्रम आधारित प्रौद्योगिकी अपनाना लाभप्रद होगा।

विकसित देशों में कम जनसंख्या से निर्यात वृद्धि और विकासशील व अविकसित देशों में जनाधिक्य व निर्यात व्यापार में कमी से जीवन स्तर का अन्तर बढ़ता जा रहा है। विकसित देश अधिक उन्नत एवं समृद्ध होते जा रहे हैं और विकासशील और अविकसित देश निरन्तर गरीबी व भूखमरी के शिकार होते जा रहे हैं।

भारत में नदियों पर बाँध बाँधकर पेयजल आपूर्ति, जल विद्युत तथा सिंचाई सुविधाओं से उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। बाँध बनाकर, वृक्षारोपन अपरदन पर नियन्त्रण, बाढ़ नियन्त्रण, मत्स्य पालन किया जा सकता है। पंजाब के हरिके बैराज से निकली इन्दिरा गाँधी नहर से पश्चिमी राजस्थान का कायाकल्प हो गया है। खनिज संसाधन सम्पन्न प्रदेशों में औद्योगिकीकरण द्वारा अधिक विकास सम्भव है। जैसे जमशेदपुर, राऊरकेला, भिलाई, दुर्गापुर आदि विश्व प्रसिद्ध स्थान बन गये है। इन प्रयासों द्वारा स्थानीय लोगों का जीवन स्तर उच्च हुआ है।

साथ ही तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी के सघन और व्यापक अनुसंधानों के पर्यावरण पर होने वाले प्रभावों का समुचित ज्ञान भी आवश्यक है।

उक्त प्रयासों के साथ ही संसाधन संरक्षण की विधियाँ, जनसंख्या पर प्रभावी नियन्त्रण, नियोजन में समग्र दृष्टिकोण, जैविक सन्तुलन, नव्यकरणीय संसाधनों का अधिक उपयोग, वैकल्पिक संसाधनों की खोज, प्राथमिकता के आधार पर उपयोग, कृत्रिम वस्तुओं का उपयोग, उन्नत एवं परिष्कृत तकनीक का उपयोग, पुनर्चक्रण, संसाधनों का बहुउपयोग और अधिकतम विकास के स्थान पर आवश्यक विकास पर बल देना आवश्यक है। इसमें ही मानव का कल्याण निहित है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दू

1. वे पदार्थ जिनका उपयोग कर मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, संसाधन कहलाते हैं।
2. मानव संसाधनों का निर्माण करता है। इसलिये मानव संसाधनों का जनक कहलाता है।
3. संसाधनों का नियोजित, विवेकपूर्ण मितव्ययतापूर्ण, पुनर्भरण क्षमतानुसार, विनाश रहित उपयोग संसाधन संरक्षण कहलाता है। संसाधनों का बिल्कुल ही उपयोग नहीं करने अथवा उनके कंजूसीपूर्ण उपयोग से कदापि नहीं है।
4. विनाश रहित सतत् विकास के लिए संसाधनों का संरक्षण आवश्यक है।
5. जनसंख्या विस्फोट, वैज्ञानिक आविष्कारों से औद्योगिकरण, नगरीकरण एवं परिवहन में द्रुत वृद्धि, पश्चिमी उपभोगवादी संस्कृति के व्यापक प्रसार से संसाधनों के अधिकतम उपभोग की प्रवृत्ति, अधिकतम विकास की प्रवृत्ति के प्रभाव के कारण संसाधन संरक्षण की समस्या उत्पन्न हुई है।
6. संसाधनों के संरक्षण की निम्न विधियाँ है– (i) जनसंख्या पर प्रभावी नियन्त्रण, (ii) नियोजन में समग्र दृष्टिकोण, (iii) जैविक सन्तुलन बनाये रखना, (iv) ऊर्जा के गैर पारम्परिक संसाधनों का अधिक उपयोग, (v) वैकल्पिक संसाधनों की खोज, (vi) प्राथमिकता के आधार पर उपयोग, (vii) पुनर्चक्रण, (viii) कृत्रिम वस्तुओं का उपयोग, (ix) उन्नत व परिष्कृत तकनीक का उपयोग, (x) संसाधनों का बहुउद्देश्यीय उपयोग।
7. पोषणीय विकास का अभिप्राय : पर्यावरण के साथ संसाधनों के सन्तुलित, विवकेपूर्ण, मिव्ययतापूर्ण, पुनर्भरण क्षमतानुसार, विनाश रहित उपयोग से है। जिससे वर्तमान और भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति सतत् विकास के साथ की जा सके।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक

1. निम्न में से जैविक संसाधन कौनसा है?
   (अ) खनिज (ब) पशु
   (स) पेट्रोल (द) हवा
2. अजैविक संसाधन का उदाहरण है?
   (अ) कोयला (ब) वन
   (स) मनुष्य (द) समुद्रीजीव
3. निम्न में ऊर्जा का परम्परागत संसाधन कौनसा है
   (अ) भूतापीय ऊर्जा (ब) पवन ऊर्जा
   (स) सौर ऊर्जा (द) पेट्रोलियम
4. ऊर्जा के गैर परम्परागत संसाधन कौनसा है–

(अ) सौर ऊर्जा (ब) कोयला
(स) प्राकृतिक गैस (द) डीजल

5. संसाधन संरक्षण में बाधक तत्त्व है
   (अ) धरातल का ऊबड़–खाबड़ होना
   (ब) तीव्र औद्योगिक एवं नगरीयकरण
   (स) अल्प विकास की दर होना
   (द) सतत विकास को अपनाना
6. पोषणीय विकास से आश्रय है
   (अ) संसाधनों का दुरूपयोग
   (ब) संसाधनों का अत्यधिक उपयोग
   (स) संसाधनों का सतत् उपयोग
   (द) संसाधनों के उपयोग को रोकना

अतिलघूत्तरात्मक

7. संसाधन से आप क्या समझते हैं।
8. मानव को संसाधन का जनक क्यों कहा जाता है।
9. संसाधन संरक्षण क्यों आवश्यक हैं।
10. संसाधन संरक्षण में बाधक चार कारणों का उल्लेख कीजिए।
11. जैविक संसाधनों के चार उदाहरण लिखिये।
12. पुनर्चक्रण विधि द्वारा किस प्रकार संसाधन संरक्षण किया जा सकता है।

लघूत्तरात्मक

13. संसाधन संरक्षण से क्या अभिप्राय है।
14. संसाधनों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।
15. जैविक व अजैविक संसाधनों में अन्तर कीजिए।
16. पोषणीय विकास किसे कहते हैं।
17. नव्यकरणीय और अनव्यकरणीय संसाधनों में अन्तर कीजिए।

निबन्धात्मक

18. संसाधन अर्थ, संरक्षण की आवश्यकता, समस्या और प्रकारों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
19. संसाधन संरक्षण की विधियों पर एक लेख लिखिए।
20. संसाधनों के पोषणीय विकास पर आपके विचार लिखिए।

पाठ 16
जैविक एवं अजैविक संसाधन
(Biotic and Non-Biotic Resources)

पिछले अध्याय में संसाधनों के वर्गीकरण से ध्यान में आता है, कि संसाधनों को उत्पत्ति के आधार पर (अ) जैविक, (ब) अजैविक संसाधनों में वर्गीकृत किया जाता है। जैविक संसाधनों के अन्तर्गत सम्पूर्ण धरातल का जैव जगत सम्मिलित होता है। इसी प्रकार अजैविक संसाधनों में भूमि, जल, खनिज संसाधन सम्मिलित होते हैं। अध्ययन और महत्त्व की दृष्टि से इस अध्याय में हम पशु सम्पदा, वन एवं मत्स्य जैसे जैविक संसाधनों का एवं जल एवं खनिज जैसे अजैविक संसाधनों का भारत के सन्दर्भ में विशेष अध्ययन करेंगे।

पशु संसाधन

भारत आदिकाल से ही ग्रामीण एवं कृषि प्रधान देश रहा है। अतः कृषि और सहायक कार्यों में पशुओं का विशेष स्थान रहा है। खेती करने, बोझा ढोने, यातायात साधन के रूप में एवं दूध, दही, मक्खन, घी, पनीर, छाछ, खोया (मावा), ऊन और चमड़ा, कम्पोस्ट खाद आदि की प्राप्ति में पशुओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। पशुओं के विशेष महत्त्व के कारण पशुओं को पशुधन के स्थान पर पशु संसाधन कहना सर्वथा उचित है।

महत्व : भारत में पशु संसाधन का महत्त्व स्पष्ट करते हुए डॉ. डार्लिंग ने लिखा है कि ''इसके बिना खेत बिना जुते–बोये पड़े रहते हैं, खलिहान खाद्यान्नों के अभाव में खाली पड़े रहते हैं तथा एक शाकाहारी देश में इससे अधिक दुखदायी बात क्या हो सकती है कि यहाँ पशुओं के अभाव में घी, दूध, मक्खन, पनीर एवं अन्य पशु उत्पादों और पौष्टिक पदार्थों की प्राप्ति का ही अकाल पड़ सकता है।

लेकिन वर्तमान में ट्रेक्टर, हार्वेस्टर, पम्पों, नहरों, विद्युत की अधिक आपूर्ति और परिवहन के साधनों के कारण धीरे–धीरे पशुओं पर निर्भरता कम होने के कारण इनका महत्त्व तेजी से घटता जा रहा है। भारत में पशु संसाधन का महत्त्व निम्नानुसार समझा जा सकता है–

(1) कृषि कार्यों जैसे हल व पटेला चलाने, रहँट, चड़स, द्वारा कुँओं से पानी खींचने, कृषि फसलें एवं चारा ढोने, गन्ना पेरने आदि में बैल, ऊँट और भैंसों का उपयोग किया जाता है।

(2) पशुओं से दूध और दूध से खोया (मावा), पनीर, दही, मक्खन, घी, छाछ, दूध का पाउडर आदि पौष्टिक आहार प्राप्त होते हैं।

(3) पशुओं के गोबर, मल–मूत्र तथा हड्डियों से खाद बनाई जाती है।

(4) पशुओं से चमड़ा व खालें प्राप्त होती हैं। भारत में 2013 में कपड़ा, कम्बल, नमदा तथा हल्के किस्म के गलीचे बनाने के लिय 3.5 करोड़ किग्रा ऊन की प्राप्ति हुई है।

(5) भारत में पशु यातायात के साधन के रूप में काम में लिये जाते हैं। रेगिस्तान में ऊँट, पर्वतीय क्षेत्रों में टट्टू, गधों और घोड़ों का कोई पूर्ण विकल्प नहीं है।

(6) भारत में इस समय लगभग 4000 पशु वध–घर (बूचड़ खाने) हैं। वर्ष 2015–16 में 30137 करोड़ रूपये का माँस व माँस पदार्थों का निर्यात किया गया है।

(7) भारत में विश्व का लगभग 20 प्रतिशत पशु संसाधन

पाया जाता है।

(8) भारत में विश्व की 12.7% गायें, 56.7% भैंसे, 14.5% बकरियाँ, 5.9% भेड़ें, 2.4% ऊँट, 1.5% सूअर, 3.1% मुर्गियाँ, 1.4% घोड़े, टट्टू, गधे और 42 हजार याक पाले जाते हैं।

(9) पशुओं के सीगों से विभिन्न प्रकार की कलात्मक वस्तुएँ एवं कंघे बनाये जाते हैं।

(10) भारत में सकल कृषि उत्पादन मूल्य का 30% पशु संसाधन से प्राप्त होता है। जिसका मूल्य लगभग 4.5 खरब रूपये हैं।

भारत में पशुपालन क्षेत्र

भारत वर्ष के सभी ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के साथ पशु पालन करना सामान्य तथ्य है परन्तु कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिसमें पशुपालन जनसंख्या का महत्त्वपूर्ण व्यवसाय है आज भी अनेकों जातियाँ अपना जीवन पशुओं के चारण, पालन के आधार पर चला रही है भारत के पशुपालन के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र निम्न हैं–

(1) हिमालय पर्वतीय प्रदेश : यहाँ उत्तराखण्ड (कुमाँऊ व गढ़वाल), हिमाचल प्रदेश (कांगड़ा, कुल्लु घाटी एवं शिमला, जम्मू और कश्मीर), हिमालय की तराई, असम व पूर्वोत्तर भारत के राज्य आदि राज्य सम्मिलित है। यहाँ पहाड़ी भाग के कारण भेड़–बकरियाँ मुख्य पालतू पशु हैं। जिनसे उत्तम किस्म की श्वेत रंग की ऊन प्राप्त होती है। इन क्षेत्रों में पर्यटनों की निरन्तर वृद्धि से दूध की माँग बढ़ने से दुग्ध पशुपालन व्यवसाय में वृद्धि हुई है।

(2) उत्तरी पश्चिमी जलवायु क्षेत्र : यह प्रमुख पशु मेखला थार मरूस्थल व इसके चारों ओर शुष्क व अर्द्ध शुष्क भागों में फैली है। अल्प वृष्टि के कारण कृषि के स्थान पर पशुपालन प्रमुख व्यवसाय है। इसमें पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान व मध्य प्रदेश गुजरात के पश्चिमी भाग सम्मिलित है। सिंचित क्षेत्रों में गेहूँ उत्पादन होता है और गेहूँ का भूसा चारे के लिये काम में लिया जाता है। वर्षा ऋतु में बोये गये ज्वार–बाजरा और प्राकृतिक चारे से पशु पाले जाते हैं। यहाँ मुख्यतः ऊँट, भेड़, बकरियाँ, गायें, घोड़े, खच्चर, गधे पाले जाते हैं।

(3) पूर्वी एवं पश्चिमी तट क्षेत्र : इसमें पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, असम, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश, पूर्वी तमिलनाडु, केरल की पश्चिमी समुद्र तटीय पेटी सम्मिलित है। पर्याप्त वर्षा और आवश्यक तापमान के कारण चावल प्रमुख फसल हैं। चावल की पुआल (डण्ठल) और चरी मुख्य चारा है। भैंस से दूध प्राप्ति तथा भैंसों से कृषि कार्य किया जता है।

(4) मध्यम वर्षा वाले क्षेत्र : इसमें दक्षिणी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश, पश्चिमी तमिलनाडु, कर्नाटक एवं पूर्वी महाराष्ट्र सम्मिलित है। कम वर्षा के कारण ज्वार–बाजरा मुख्य फसल है। यह भारत का प्रमुख भेड़ पालन क्षेत्र है। किन्तु घटिया किस्म की ऊन प्राप्त होती है। नलकूप और सिंचाई सुविधा वाले क्षेत्रों में उन्नत नस्ल की गायें व भैंसे पाली जाती हैं।

प्रमुख पालतू पशु

किसी समय पशु सम्पदा में समृद्ध भारत में कई कारणों से यहाँ पालतू पशुओं की संख्या लगातार घट रही है। 2007 में 52.97 कुल पशु संख्या करोड़ थी, वह घटकर पाँच साल बाद 2012 में 51.21 करोड़ रह गई है।

(1) गाय–बैल : मानव आदिमकाल से गाय–बैल पालन कार्य करता रहा है। भारत में गाय और बैल को समाज–जीवन एवं धार्मिक कार्य में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त होने का कारण, इनकी कृषि एवं मानव के लिए उपयोगिता है। वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह प्रमाणित हो चुका है कि भारतीय नस्ल की गायों का दूध सर्वश्रेष्ठ एवं A_2 वर्ग का है। भारत का विश्व में गाय–बैल पालन में ब्राजील के बाद द्वितीय स्थान है, जिनकी संख्या लगभग 19.09 करोड़ है, जो विश्व की कुल संख्या का 12.7 प्रतिशत है। यहाँ सर्वत्र गाय, बैल पाले जाते हैं। जिनकी कई नस्लें है। विविध और उत्तम स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों की प्राप्ति, पौष्टिक एवं कम वसायुक्त होने से गाय का दूध स्वास्थ्य के लिये अमृत तुल्य पेय पदार्थ है।

(2) भैंसे : गाय की तुलना में भैंस अधिक दूध देती है। यह अधिक वसायुक्त, पौष्टिक और गाढ़ा होता है। विश्व में भारत का भैस पालन में प्रथम स्थान है। भारत में 10.89 करोड़ भैंसें पाली जाती है, जो विश्व की 56.7 प्रतिशत है। ठण्डक एवं अधिक जल की आवश्यकता के कारण अधिकाँश भैंसे आर्द्र प्रदेशों में पाली जाती हैं। उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र प्रमुख भैंस पालक राज्य हैं। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड और तमिलनाडु में भी भैंसे पाली जाती है। मुर्रा, जाफरावादी, भदावरी, सूरती नीली, मेहसाना, देशी आदि प्रमुख नस्लें है।

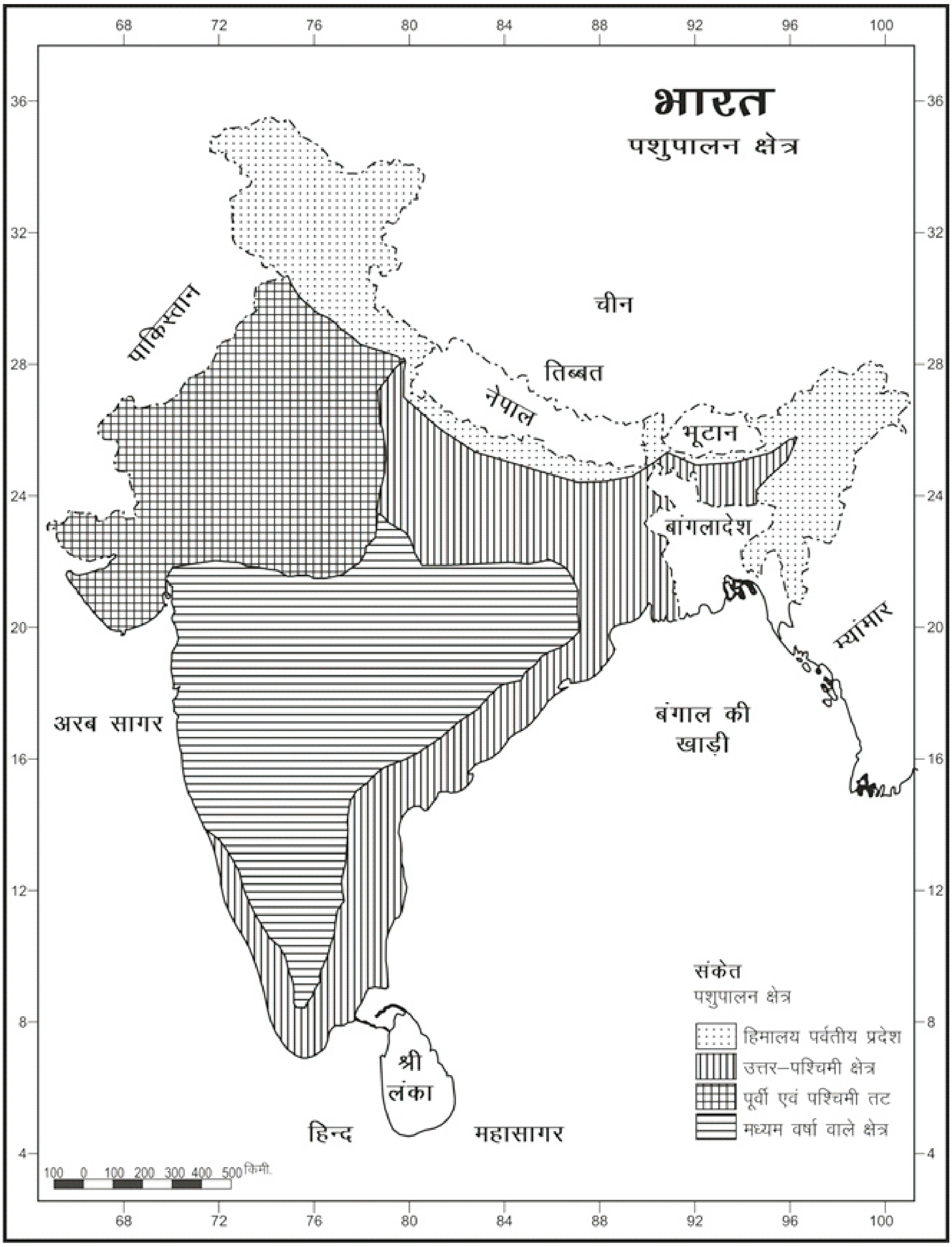

मानचित्र 16.1 : भारत के पशुपालन क्षेत्र

(3) बकरियाँ : भारत में बकरी को गरीब की गाय कहा जाता है। बकरियाँ दूध व माँस के लिये पाली जाती है। बकरी प्रतिदिन एक से तीन लीटर तक दूध दे देती हैं। बकरी का रख–रखाव खर्च कम व वंश वृद्धि बहुत शीघ्र होती है। इसकी मैंगनी उत्तम प्राकृतिक खाद है। भारत में 13.52 करोड़ से अधिक बकरियाँ पाली जाती है, जो विश्व की 14.5 प्रतिशत हैं। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पंजाब, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश और झारखण्ड प्रमुख बकरी पालन राज्य हैं। बकरी पालन माँस के उद्देश्य से अधिक किया जाता है।

(4) भैंडे : भेड़ें शुष्क, अर्द्ध शुष्क और पहाड़ी भागों में जीविकोपार्जन का प्रमुख साधन है। भेड़ को ऊन व माँस दोनों के लिये पाला जाता है। भेड़ से कुछ मात्रा में दूध भी प्राप्त किया जाता है। विश्व में भेड़ पालन में भारत का चीन के बाद द्वितीय स्थान है। यहाँ लगभग 6.51 करोड़ भेड़ें पाली जाती हैं। भारत की

60 प्रतिशत भेंड़े राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु में पाली जाती है। शेष मध्यप्रदेश, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, उत्तराखण्ड और उत्तर प्रदेश में पाली जाती है। भारतीय भेड़ों की ऊन घटिया किस्म की होने से इसे गलीचा ऊन कहा जाता है। अच्छी किस्म की ऊन, ईरान, अफगानिस्तान, मध्य एशिया, नेपाल व आस्ट्रेलिया से आयात की जाती है।

(5) ऊँट : ऊँट रेगिस्तान का एक अति महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी पशु है। गद्दीदार पैर रेत में नहीं धँसते के कारण ऊँट रेगिस्तान में तेज गति से दौड़ सकता है। पेड़ों के पत्ते व झाड़ियाँ खाकर अपना पेट भर लेता है। मलमूत्र गाढ़ा व चमड़ी मोटी होने के कारण पसीना कम आने से ऊँट को जल की आवश्यकता कम होती है। ऊँट के कूबड़ में एकत्रित चर्बी से जल पूर्ति कर लेने से यह सात दिन बिना पानी पिये रह सकता है। इसलिये गर्म व शुष्क भागों में आसानी से पाला जा सकता है। यह भारी बोझ ढो सकता है और एक दिन में 50 किमी तक चल सकता है। ऊँट में वर्षों बाद भी मार्ग याद रखने की अद्भुत क्षमता होती है। रेतीले मरूस्थल में परिवहन के साधन के रूप में ऊँट का कोई विकल्प नहीं है। इसलिये ऊँट को 'रेगिस्तान का जहाज' कहा जाता है।

रेगिस्तान में ऊँट की उपयोगिता के कारण ही सैनिक टुकड़ियाँ सवारी व बोझा ढोने के लिये ऊँट का उपयोग करती है। ऊँट सवारी करने के अतिरिक्त हल जोतने, बोझा ढोने, कुओं से पानी खींचने व गाड़ी खींचने में काम आता है। ऊँट के बालों से रस्सियाँ, कम्बल, दरियाँ व चमड़े से काठी, थैले, तेल रखने की कुप्पियाँ और जूतियाँ बनाई जाती है। इसका दूध पीने के काम आता है। भारत में ऊँटों की संख्या लगातार घट रही है। भारत में विश्व के 2.4 प्रतिशत ऊँट पाले जाते हैं। यहाँ कुल 4 लाख ऊँटों में से 50 प्रतिशत से अधिक अकेले राजस्थान में पाले जाते हैं। शेष पंजाब, हरियाणा, गुजरात, उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश में पाले जाते हैं। भारत में एक कूबड़वाला और अरब देशों में दो कूबड़ वाला ऊँट पाया जाता है।

(6) अन्य : भारत का घोड़े, खच्चर, टट्टू, गधे, सूअर, मुर्गी, याक पालन में भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

भारत में पशुधन की कमजोर स्थिति के कारण

भारत में विश्व के 20 प्रतिशत पशु पाले जाते हैं और विश्व में दूध उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान है। यहाँ विश्व का 18 प्रतिशत दूध उत्पाद होता है। यहाँ के पशु कम दूध देने वाले व कमजोर होने से प्रति पशु दूध व माँस कम प्राप्त होता है। यहाँ पशुओं की कमजोर स्थिति के निम्नलिखित कारण है–

(1) पौष्टिक आहार व हरे चारे की कमी : अधिक जनसंख्या के भरण–पोषण के लिये अन्न उत्पादन मुख्य कार्य है। अतः पशुपालन गौण व्यवसाय है। व्यवस्थित और उत्तम चारागाहों के अभाव में हरा चारा वर्ष भर न मिलने से फसलों के डंठल व भूसा खिलाया जाता है। उचित पौष्टिक तथा पेट भर चारे के अभाव में पशु कमजोर होने से दूध और माँस कम प्राप्त होता है।

(2) अच्छी पशु नस्लों का अभाव : यहाँ कम दूध देने वाले पशुओं की संख्या अधिक है। इसलिये भारत सरकार पशु नस्ल सुधार हेतु कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों व पशु चिकित्सालयों का विस्तार धीरे–धीरे ग्रामीण क्षेत्रों में कर रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में केन्द्रों की कमी, पूर्ण सुविधा का अभाव तथा ग्रामीण कृषक पशुपालकों की उदासीनता से पूर्ण सफलता नहीं मिली है।

(3) पशुओं की बीमारियाँ : सभी पशुओं को एक साथ चराने, एक ही बाड़े में बाँधने, सड़ी गली चीजें खिलाने, गन्दा जल पिलाने से अनेक पशु सम्पर्क जन्य रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। वर्षा काल में खुरपका, मुँहपका, जहरवाद, जहरी बुखार, गलघोटूं, आदि रोगों से कई पशुओं की मृत्यु हो जाती है।

(4) पशुपालकों की अज्ञानता व लापरवाही : परम्परागत पशुपालन से पशुओं को एक ही बाड़े में बाँधना, एक साथ चराना, पौष्टिक व पूर्ण आहार नहीं देना, मक्खी, मच्छरों से और सर्दी–गर्मी से बचाव नहीं कर पाना और स्वच्छ जल के अभाव में कमजोर होने से कम दूध देते हैं। दुधारू पशुओं को भी हरे चारे के अभाव में फसलों के डण्ठल, भूसा खिलाने से दूध उत्पादन कम होता है। भारत में अब कई दुग्ध शालाओं में वैज्ञानिक विधि से पशु पालन किया जाने लगा है। जिससे पशु स्वस्थ्य, हष्ट, पुष्ट होने से दूध व माँस दोनों ही अधिक देने लगे हैं।

भारत में पशु संसाधन विकास के उपाय

भारत में विश्व के सर्वाधिक पशु 20 प्रतिशत होते हुए भी दूध व माँस का तुलनात्मक उत्पादन बहुत कम है। अतः भारत में पशु संसाधन विकास हेतु निम्नलिखित उपयों को अपना कर सार्थक परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं –

(i) पशुओं के पौष्टिक व पूर्ण आहार के लिये उत्तम चरागाहों का विकास किया जाना चाहिये। सिंचाई द्वारा वर्ष भर हरा चारा उगाकर पशुओं को खिलाया जाना चाहिये। सरकार द्वारा पशु पालकों को कम कीमत पर पौष्टिक पशु आहार उपलब्ध कराया जाना चाहिये।

(ii) भारत में अधिकाँश जनसंख्या (69 प्रतिशत) गाँवों में निवास करती है। यहाँ किसी भी योजना की सफलता के लिये उसे ग्रामीण स्तर तक पहुँचाना नितान्त आवश्यक है। अतः गाँवों के पशु चिकित्सालय व कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खोलकर संकर प्रजनन द्वारा

पशुओं की नस्ल सुधारना आवश्यक है।

(iii) बीमार पशु चिकित्सा के लिये अधिक दूर नहीं ले जाया जा सकता, इसलिये ग्राम पंचायत स्तर पर पशु चिकित्सालय खोले जाने चाहिए। इन चिकित्सालयों में कृत्रिम गर्भाधान और पशु रोगों की रोकथाम के टीके तथा बीमारियों की दवाईयाँ भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होनी चाहिये।

(iv) वैज्ञानिक ढंग से पशुपालन के तरीकों का गाँव–गाँव में प्रचार–प्रसार किया जाये। जिससे कम पशुओं से ही अधिक दूध, माँस तथा ऊन प्राप्त की जा सके। इस प्रकार कम परिश्रम से अधिक आय प्राप्त कर पशुपालन को लाभप्रद व्यवसाय बनाया जा सकता है।

वन संसाधन

प्राकृतिक संसाधनों में वन महत्त्वपूर्ण संसाधन है। मानव आदिकाल से ही वनों पर आश्रित रहा है। भारत में वृक्षों का देवता मानकर पूजा की जाती रही है। वृक्षारोपण एक पुनीत कार्य माना जाता था। इसलिये लोग अपने घर के आंगन में नीम और जामुन आदि के पेड़ लगाते थे।

1952 में घोषित वन नीति के अनुसार देश की कुल भूमि के 33 प्रतिशत भाग पर वन होने चाहिए। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वनों की अन्धाधुन्ध कटाई और पुनः उतनी मात्रा में वन विकसित नहीं कर सकने के कारण वन क्षेत्र घटकर 2001 में 19.40 प्रतिशत रह गया था। सरकार के प्रयासों और जन चेतना से इसमें वृद्धि होकर यह सन् 2015 में 21.34 प्रतिशत (7,01,673 वर्ग किमी.) हो गया।

वन विनाश के कारण

भारत में घटते वन क्षेत्र के लिये निम्न कारण उत्तरदायी रहे हैं–

(1) कृषि हेतु भूमि की माँग में निरन्तर वृद्धि : देश की जनसंख्या 1981 में 63.33 करोड़, सन् 2001 में 102.7 करोड़ तथा 2011 में 121.01 करोड़ हो गई। इस प्रकार द्रुत गति से बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण–पोषण के लिये अधिक अन्न उत्पादन की आवश्यकता अनुभव की गई। इससे कृषि क्षेत्र में विस्तार के लिये वनों की अन्धाधुन्ध कटाई की गई और वन क्षेत्र लगातार घटता गया।

(2) तीव्र औद्योगिकीकरण व शहरीकरण : स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में तीव्र गति से औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण हुआ। इसलिये औद्योगिक इमारतों, आवासीय कॉलोनियों, व्यापारिक केन्द्रों, मकानों, कार्यालयों, संस्थाओं, सड़कों और मनोरंजन क्षेत्र स्थापित करने के लिये वनों की अंधाधुन्ध कटाई की गई।

(3) घरेलू आवश्यकताओं के लिये वनों की कटाई : रेलमार्ग निकालने रेल के डिब्बों, स्लीपरों, राजमार्गों, जहाज बनाने, फर्नीचर, भवन निर्माण, ईंधन आदि की पूर्ति के लिये वनों को शीघ्र नष्ट किया गया।

(4) अनियंत्रित चराई : प्राकृतिक हरे चारे की कमी आने पर पशु वृक्षों की नीची टहनियों को खा जाते हैं और अधिक ऊँचाई वाली टहनियों को पशुपालन काटकर पशुओं को खिलाते हैं। पशुओं के खुरों से नये छोटे पौधे दबकर टूट जाते हैं। इस प्रकार अनियन्त्रित और बेरोक–टोक चराई से वन धीरे–धीरे कम होते गये।

(5) स्थानान्तरित कृषि प्रणाली : नागा जनजाति द्वारा झूमिंग कृषि तथा भीलों द्वारा दाहदिया कृषि की जाती है जो स्थानान्तित कृषि है। इसमें 3–4 वर्ष बाद स्थान बदलकर कृषि करने के लिये वृक्षों की कटाई करने से तीव्र गति से वन विनाश हुआ है।

(6) अन्य कारण : बड़ी व बहुद्देशीय सिंचाई परियोजनाओं का विकास, सरकारी नियमों की अवहेलना, नगरीय जनसंख्या में वृद्धि, सत्ता का दुरूपयोग, बढ़ता खनन क्षेत्र, वृक्षों में कीड़े व बीमारियाँ लगना, दावाग्नि (जंगल में आग लगना) आदि कारणों से वन नष्ट होने से वन क्षेत्र तीव्रता से घटता गया।

वितरण

भारत की विशालता के कारण यहाँ जलवायु, उच्चावच और मिट्टी की भिन्नता पाई जाती है। अतः देश में विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं, जो निम्न प्रकार है–

(1) उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन : जहाँ 200 सेमी या इससे अधिक वार्षिक वर्षा और 28°C वार्षिक तापमान रहता है वहाँ इस प्रकार के हमेशा हरे भरे रहने वाले वन पाये जाते हैं। इन वनों के तीन प्रमुख क्षेत्र है। (अ) उत्तरी–पूर्वी भारत हिमालय के तराई प्रदेश, असम, मेघालय, त्रिपुरा, नागालैण्ड, मिजोरम और अरूणाचल प्रदेश के दक्षिणी भाग, (ब) पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल तट पर महाराष्ट्र से केरल तक, (स) अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह।

पर्याप्त वर्षा और उच्चताप के कारण लम्बे और शीघ्र बढ़ने वाले होते हैं। इनकी लकड़ी कठोर और काले रंग की होती है। वृक्षों की लम्बाई सामान्यतः 40 से 60 मीटर तक होती है। वृक्षों के बीच में विभिन्न प्रकार की लताओं, झाड़ियों और छोटे पौधों की अधिकता दलदल और धरती पर सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचने से इन वनों का विदोहन करना अत्यधिक कठिन और व्यय साध्य है। इन वनों में एक स्थान पर एक जैसे वृक्ष नहीं मिलकर कई प्रकार के वृक्ष मिलते

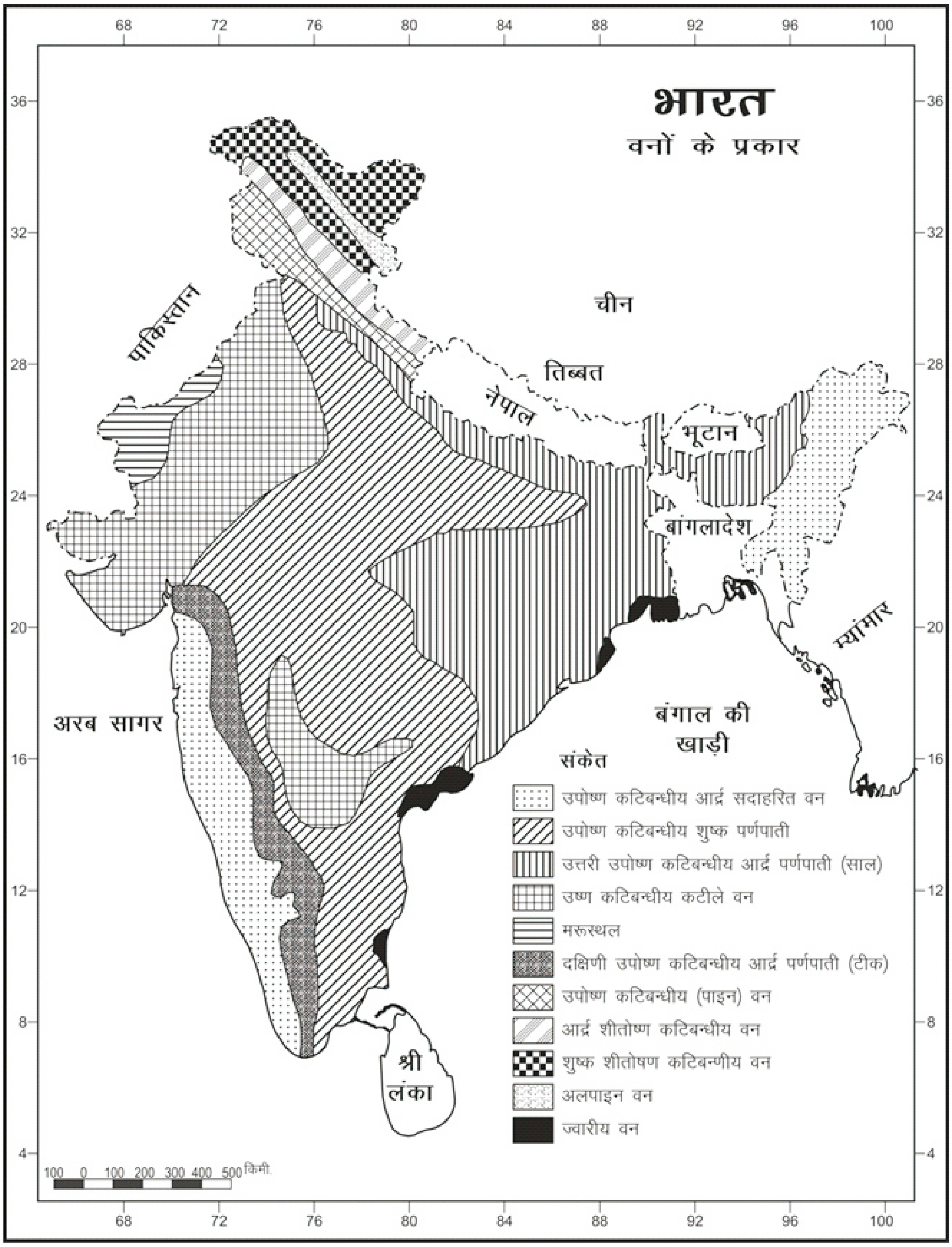

मानचित्र 16.2 : भारत वनों के प्रकार

मुख्य वृक्ष : लौह काष्ठ, महागनी, गटापार्चा, इबोनी, तून, नारियल, ताड़, रबड़, सिनकोना, बाँस, साल, जंगली आम, गुरजन, तुलसर, बैंत, चपलास आदि वृक्ष और कई तरह की लताएँ पाई जाती हैं।

(2) मानसूनी या पतझड़ वन : ये वन 100 सेमी से 200 सेमी तक औसत वार्षिक वर्षा तथा 26°C से 30°C तक औसत वार्षिक तापमान वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। वर्ष में एक बार ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में इन वनों की पत्तियाँ झड़ जाने के कारण इन्हें पर्णपाती या पतझड़ वन भी कहते हैं। इनमें वृक्षों की ऊँचाई सामान्यतः 20 से 45 मीटर होती है। वृक्षों की कम सघनता से इनके बीच घास उग जाती है। वन क्षेत्रों तक यातायात के साधनों का विकास हो गया है। इनकी लकड़ी

अधिक कठोर नहीं होती है। इन वन संसाधनों का विदोहन सरलता से किया जा सकने के कारण इनका अत्यधिक महत्त्व है।

मानसूनी वनों के चार प्रमुख क्षेत्र है– (अ) हिमालय के बाहरी व निचले ढालों पर (हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, असम), (ब) मध्य भारत (मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, उड़ीसा), (स) पश्चिमी घाट के पूर्वी ढाल (महाराष्ट्र, कर्नाटक का आर्द्र पठारी भाग, केरल के पूर्वी शुष्क भागों में कुमारी अन्तरीप तक), (द) पूर्वी घाट के दक्षिणी भाग (आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु)।

मुख्य वृक्ष : सागवान, साल, शीशम, चन्दन, रोजवुड, कुसुम, बाँस, पलाश, हरड़, बहेडा, आँवला, हल्दू, इबोनी, आम, जामुन, सिरस, महुआ, पीपल, बरगद, खैर, सेमल और गूलर आदि।

(3) उष्ण कटिबन्धीय वन : ये वन 50 सेमी से 100 सेमी औसत वार्षिक वर्षा तथा 20°C से 35°C तक औसत वार्षिक तापमान वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। इन वनों के दो प्रमुख क्षेत्र है– (अ) उत्तरीय पश्चिमी भारत (द.प. पंजाब, हरियाणा, राजस्थान के पूर्वी भाग व अरावली पर्वत, द.पं. उत्तर प्रदेश)। (ब) दक्षिणी प्रायद्वीप के शुष्क भाग (आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात और आन्ध्र प्रदेश के आन्तरिक भाग)। इन वनों में पाये जाने वाले वृक्षों की जड़े लम्बी, पत्तियाँ मोटी व तना खुरदरा होता है। वर्षा की कमी के कारण वृक्षों की ऊँचाई 6 से 9 मीटर तक होती है।

मुख्य वृक्ष : बबूल, खेजड़ा, आम, जामुन, नीम, महुआ, बरगद, आँवला, रीठा व कीकर आदि। इन वनों का स्थानीय महत्त्व है।

(4) मरूस्थलीय वन : ये वन 50 सेमी से कम औसत वार्षिक वर्षा तथा 25°C से 35°C तक औसत वार्षिक तापमान वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। इसप्रकार के वन द.प. पंजाब, पश्चिमी राजस्थान, गुजरात और मध्य प्रदेश के कम वर्षा वाले भागों में पाये जाते हैं। इन वनों में वृक्षों की जड़े लम्बी मोटी होती है। जिससे शुष्क मौसम में गहराई से पानी प्राप्त कर वृक्ष जीवित रहते हैं। पत्ते छोटे–मोटे और काँटेदार तथा अत्यधिक खुरदरा या काँटेदार होता है। इससे वारूपोत्सर्जन क्रिया में जल कम उड़ता है। इन वनों में वृक्षों की तुलना में झाड़ियों की संख्या अधिक होती है। वृक्ष दूर–दूर तथा कम संख्या में होते हैं। खजूर को छोड़कर अन्य वृक्षों की लम्बाई कम होती है।

मुख्य वृक्ष : नागफनी, कैर, खैर, खेजड़ा, खजूर, बबूल, बेर, नीम, पीपल, बरगद, राम बाँस, थूअर आदि।

(5) पर्वतीय वन या शीतोष्ण सदाबहार वन : ये वन पूर्वीय पश्चिमी हिमालय प्रदेश, असम की पहाड़ियों, मध्य प्रदेश के पंचमढ़ी तथा महाराष्ट्र के महाबलेश्वर के पहाड़ी भागों में पाये जाते हैं। इनमें वृक्षों की पत्तियाँ घनी और सदाबहार व तना मोटा होता है। पेड़ों के तनों पर लताएँ लिपटी रहती हैं और नीचे सघन झाड़ियाँ पाई जाती है। वृक्षों की ऊँचाई 15 से 18 मीटर तक होती है। इन वृक्षों की लकड़ी मुलायम होने से कागज की लुग्दी, पेकिंग, प्लाई और प्लाई बोर्ड बनाने में काम आती है।

मुख्य वृक्ष : चीड़, सनोवर, देवदार, फर, स्प्रूस, लार्च, बर्च, मेपिल, एल्म और चेस्टनट आदि। अधिक ऊँचाई पर यूजेनिया, मिचोलिया, रोडेनड्रोस आदि वृक्ष पाये जाते हैं। ये सदा हरे–भरे रहते हैं।

(6) ज्वारीय या दलदली वन : ये वन मुख्यतः गंगा–ब्रह्मपुत्र व हुगली नदियों के डेल्टा तथा कृष्णा, कावेरी, महानदी और गोदावरी नदियों के मुहानों पर कीचड़ व दलदली भागों में पाये जाते हैं। समुद्र तट पर ज्वार भाटा के कारण वृक्षों की जड़ें खारे पानी में डूबी रहती है तथा जड़ों से शाखायें निकलकर चारों तरफ फैल जाती है। वृक्ष ऊँचे तथा हरे–भरे रहते हैं और लकड़ी मुलायम होती है।

मुख्य वृक्ष : गंगा–ब्रह्मपुत्र के डेल्टा में सुन्दरी वृक्ष तथा हुगली नदी के डेल्टा में मेन्ग्राव वृक्ष अधिक पाये जाते हैं। अन्य वृक्षों में बाँस, ताज, बेंत, ताड़, नारियल, रोजीफोरा, सोनरीटा, हेरोटीरिया, फोनिक्स आदि है।

वनों से प्राप्त उपजें

भारतीय वनों से विभिन्न प्रकार की महत्त्वपूर्ण उपजें प्राप्त होती है। इनमें से कुछ उपजें विदेशों में प्राप्त नहीं होने से उनका विशेष महत्त्व है। जैसे चन्दन की लकड़ी, बीड़ी पत्ता (तेन्दू), साखू, वेलेडोना, सर्पगंधा आदि। वनों से प्राप्त उपजों को दो भागों में बांटा जा सकता है।

(1) मुख्य उपजें : वनों से प्राप्त होने वाली उपजों में लकड़ियाँ प्रमुख उपजें हैं। देवदार, चीड़, मेपिल, फर, स्प्रूस, श्वेत सरोवर, साल, सागवान, शीशम, महुवा, चन्दन, सेमल, हल्दू, अर्जुन, आम, खैर, बबूल, बाँस, नीम आदि प्रमुख और महत्त्वपूर्ण लकड़ियाँ हैं।

(2) गौण उपजें : वनों से अनेक प्रकार की गौण उपजों में लाख, कत्था, गोंद, महुआ, तुंग, बैत, रबर, फल, शहद, जड़ी–बूटियाँ, औषधियाँ, कच, चमड़ा बनाने व रंगने के पदार्थ, तारपीन का तेल, विरोजा, प्राकृतिक रेशम, धांगे आदि प्रमुख व महत्त्वपूर्ण है।

वन संसाधन का महत्व

वनों से ही सभ्यता का जन्म, विकास और फलना– फूलना हुआ है। जहाँ कहीं वनों का विकास रूक जाता है। वहाँ शुष्कता बढ़ते–बढ़ते मरूस्थलों की उत्पत्ति हो जाती है। वन संसाधन

प्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष रूप से सकल जीव– जगत को विभिन्न रूप, प्रकार और व्यवस्था से भोजन, रोजगार व आश्रय प्रदान कर पोषण देते हैं। वनों के महत्त्व के बारे में लिखा है कि ''वन राष्ट्रीय सम्पत्ति'' है। आधुनिक सभ्यता को इनकी बड़ी आवश्यकता है। भारत में वन संसाधन के महत्त्व को उनके द्वारा होने वाले लाभों द्वारा सहज ही समझा जा सकता है।

वनों से प्रत्यक्ष लाभ

(1) भारत की राष्ट्रीय आय का 2 प्रतिशत वन संसाधन से प्राप्त होता है।

(2) भारत में वन संसाधन से लाखों व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होता है।

(3) देश के 2.5 करोड़ आदिवासी वनों में निवास करते हैं। वन उनकी आजीविका के मुख्य साधन है।

(4) वन क्षेत्र 5.5 करोड़ पशुओं को चराने की सुविधा प्रदान करते हैं।

(5) वनों से इमारती उपयोग, फर्नीचर, कृषि उपकरणों, रेल के डिब्बों, जहाज, वाहनों व ईंधन आदि के लिये लकड़ी प्राप्त होती है। साल, सागवान, शीशम, देवदार, बबूल, चीड़ प्रमुख इमारती लकड़ियाँ हैं।

(6) वनों से कागज, माचिस, रेशम, लाख, फर्नीचर, प्लाईवुड, पेकिंग, रबर, रंग, खिलौनो के सामान बनाने वाले उद्योगों के लिये कच्चा माल मिलता है।

(7) वनों से फल–फूल, कत्था, तारपीन का तेल, गोंद, बाँस, बैंत, बिरौजा, चमड़ा कमाने व रंगने के पदार्थ प्राप्त होते हैं।

(8) वनों से हरड, बहेड़ा, आंवला आदि औषधियाँ व जड़ी–बूटियाँ प्राप्त होती है।

(9) वन वन्य जीवों के भोजन व आश्रयदाता होते हैं। भारतीय वनों में 500 प्रकार के वन्य जीव पाये जाते हैं। इसलिये वन मनोरंजन स्थल होते हैं।

वनों से अप्रत्यक्ष लाभ

(1) वन वाष्पोत्सर्जन क्रिया द्वारा वायु को आर्द्र बनाकर वर्षा करने में सहायक होते हैं।

(2) वन जलवायु को सम बनाते हैं और अधिक वर्षा में सहायक होते हैं।

(3) वनों से जल रूककर धीमी गति से बहता है, जिससे भूमि अपरदन और बाढ़ का प्रकोप कम हो जाता है।

(4) वन पवन के मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर, आँधी तूफान की प्रचण्डता और मरूस्थल के प्रसार को रोकते हैं।

(5) वन भूजल स्तर को ऊँचा उठाते हैं।

(6) वनों के भूमि में दब जाने से दीर्घ काल में खनिज कोयले का निर्माण होता है।

(7) वृक्षों की पत्तियों से ह्यूमस तथा जीवांश मिलने से मृदा की उर्वरकता बढ़ जाती है।

(8) वन जैविक सन्तुलन, सौन्दर्य एवं उत्तम स्वास्थ्य के प्रतीक होते हैं।

(9) वन वायु व ध्वनि प्रदूषण को रोकते हैं। वृक्ष वायुमण्डल की कार्बन डाई ऑक्साइड को भोजन के रूप में ग्रहण कर शुद्ध ऑक्सीजन छोड़ते हैं।

(10) वन हरित गृह प्रभाव को रोकते हैं।

वन विनाश के दुष्प्रभाव

(1) वन विनाश से वर्षा की मात्रा कम होकर जलवायु शुष्क होने लगती है।

(2) वन विनाश से वनों पर आश्रित उद्योग नष्ट होने लगते हैं और लोगों के बेरोजगार होने से राष्ट्रीय आय में ह्रास होने लगता है।

(3) वनों की कटाई से नदियों का प्रवाह तेज होता है जिससे बाढ़ का खतरा बढ़ जाता है तथा भूमि का अपरदन तीव्र होता है।

(4) वन विनाश से भूमिगत जल स्तर कम होता है और चारों की कमी होने लगती है।

(5) आँधी–तूफानों की प्रचण्डता बढ़ती है और मरूस्थलों का प्रसार होने लगता है।

(6) वन विनाश से इमारती व ईंधन लकड़ी कम होने लगती है।

(7) वन विनाश से कार्बन डाई ऑक्साइड का स्तर बढ़ेगा, जिससे पृथ्वी पर तापमान बढ़ेगा।

(8) वन विनाश से वायु प्रदूषण बढ़ेगा जिससे श्वासरोग, मानसिक तनाव, उच्च रक्त चाप, खुजली, एलर्जी, थकान आदि से मानव की कार्यक्षमता धीरे–धीरे कम होने लगती है।

(9) वन विनाश से पारिस्थितिकी असन्तुलन पैदा होगा।

(10) वन विनाश से वन्य जीव जन्तुओं की प्रजातियाँ नष्ट होने लगती है।

वनों का संरक्षण

भारतीय संस्कृति में वनों का महत्त्व सदैव से रहा है। यहाँ वृक्ष काटना तो दूर कोई उनका पत्ता भी नहीं तोड़े, इसलिये सभी जाति समूहों के अपने–अपने पारम्परिक वृक्ष को देवता माना है, उनमें ईश्वर का निवास बताया गया है। जैसे किसी समाज का वृक्ष देवता पीपल है तो किसी का अशोक, बरगद और नीम आदि। इस प्रकार व्यक्तियों की भावनाओं को वृक्षरूपी ईश्वर से जोड़कर बिना किसी सरकारी आदेश के वनों का संरक्षण हो जाता था।

प्राचीनकाल में सम्पूर्ण देश में तपोवन पाये जाते थे। इनमें ऋषि–मुनि, तपस्वी साधना, आराधना चिन्तन और मनन किया करते थे। महाभारत जैसे महान ग्रन्थ की रचना की नैमिषारण्य वन में वेद व्यास जी द्वारा की गई। नैमिषारण्य वन, अशोक वन, पंचवटी, नन्दन–कानन, दण्डकारण्य का आज भी विशेष महत्त्व है। वर्तमान में अशोक भारत का राष्ट्रीय वृक्ष है। भारतीय जन–जीवन में वनों के महत्त्व को अग्नि पुराण के इस कथन से समझा जा सकता है। ''एक वृक्ष दस पुत्रों के बराबर होता है।'' देश की बढ़ती जनसंख्या, नगरीकरण, औद्योगीकरण के कारण वन क्षेत्र निरन्तर कम होते जा रहे हैं इसलिए भी वनों का संरक्षण आवश्यक है। भारत के कुल वन

आरेख 18.1 : भारत : वन क्षेत्र (2013)

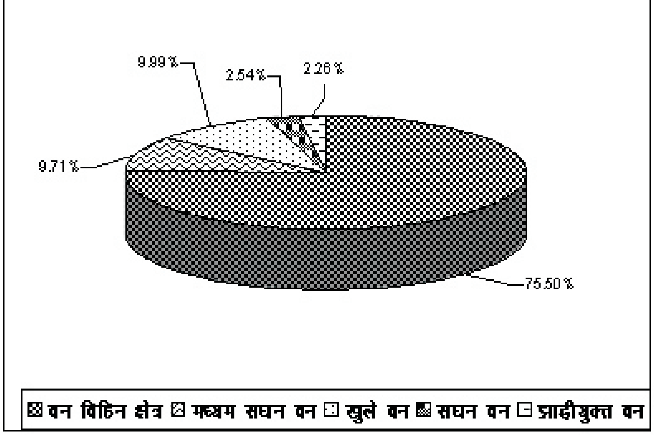

आरेख को देखने से स्पष्ट है कि वनों का संरक्षण सम्पूर्ण मानव जनसंख्या के कितना आवश्यक है।

प्राणी जगत प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से वनस्पति पर निर्भर करता है। स्वयं मानव उपभोक्ता की श्रेणी में आता है। इसी अध्याय में दिये गये वनों से लाभ द्वारा वनों का महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। इसलिये वन संसाधन का संरक्षण परम आवश्यक है। भारत में वन संरक्षण व वन विकास के साथ बेटी बचाओ का निम्न दृष्टान्त अनुकरणीय है।

- बिहार के भागलपुर जिले में मुख्यालय से 5 किमी दूर धरहरा नामक एक छोटा सा गाँव है। इस गाँव ने बेटी और वृक्ष बचाकर पूरी दुनिया के समक्ष एक बेजोड़ और अनुकरणीय दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। इस अभियान से राज्य के मुख्यमंत्री भी जुड़ चुके हैं। गाँव के अमीर–गरीब सब लोग बेटी के जन्म पर पेड़ लगाना अपने जीवन का परम कर्त्तव्य मानते हैं। लोग अपनी क्षमता एवं सामर्थ्य के अनुसार कोई 1 तो कोई 10 तो कोई 25 से 50 तक पेड़ लगता है। पेड़ों के बड़ा होने तक नियमित देखभाल और पानी की समुचित प्रबन्ध भी करते हैं। जिस व्यक्ति के पास पेड़ लगाने के लिये स्वयं की जमीन नहीं है वह गाँव की ठाकुरवाड़ी की जमीन पर पेड़ लगाता है। बेटी और पेड़ के संवारने के कारण इस गाँव की महक दूर–दराज तक फैलने लगी है।
- राजस्थान के जोधपुर में अमृता देवी ने अपने प्राण देकर भी वृक्षों की रक्षा की। वन संरक्षण का इससे बड़ा उदाहरण विश्व में दूसरा कोई नहीं है।

मत्स्य संसाधन

भारत में अनेक नदियाँ, नहरें, झीलें, बाँध, तालाब, जलाशय और सदा खुले रहने वाले विशाल समुद्र एवं एवं भौगोलिक कारकों के कारण मत्स्य संसाधन के विकास की प्रबल संभावनाएँ हैं। देश के विभिन्न भागों में लगभग 1800 प्रजातियों की मछलियाँ पाई जाती है। इनमें से कुछ किस्मों की मछलियाँ व्यावसायिक स्तर पर पकड़ी जाती है।

भारत में मत्स्य उत्पादन योग्य सम्भावित क्षेत्र के केवल 25 प्रतिशत भाग पर ही मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यहाँ कुल मत्स्य उत्पादन का 60 प्रतिशत महासागरों से तथा 40 प्रतिशत आन्तरिक जलाशयों से प्राप्त किया जाता है। महासागरों से प्राप्त होने वाली कुल मछलियों का 70 प्रतिशत पश्चिमी समुद्री तट तथा 30 प्रतिशत पूर्वी समुद्री तट से प्राप्त होता है। भारत में मछली की खपत और बढ़ते निर्यात से डेयरी विकास एवं मुर्गी पालन की तरह मत्स्य व्यवसाय भी वैज्ञानिक पद्धतियों से किया जाने लगा है।

भारत में मत्स्य उद्योग का महत्त्व

कृषि प्रधान भारतीय अर्थ व्यवस्था में मत्स्य संसाधन का पर्याप्त महत्त्व हैं।

(1) मछलियाँ प्रोटीन युक्त आहार होने से आहार को सन्तुलित बनाकर कुपोषण से रक्षा करती हैं।

(2) मत्स्य व्यवसाय से लगभग 1.14 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है और जीवन स्तर ऊँचा उठता है।

(3) मछलियाँ के निर्यात से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है जो व्यापार के सन्तुलन में सहायक है।

(4) मत्स्य व्यवसाय में 1.50 लाख नावें व 8 लाख परिवार लगे हुए हैं।

(5) मत्स्य व्यवसाय से नाव बनाना, मछली पकड़ने के जाल, औजार, रस्सियाँ, पकड़ी गई मछलियों को सुखाने, डिब्बा बन्द करने, उनका तेल निकालने, खाद बनाने, मत्स्य गोदाम आदि सहायक व्यवसायों का सृजन हुआ है।

मत्स्य उपलब्धता की अनुकल दशाएँ

(1) छिछले समुद्र – 100 फैदम (600 फुट) तक गहरे छिछले समुद्र तट मछलियों के लिये अनुकूल होते हैं। इस गहराई

तक सूर्य की किरणें आसानी से पहुँच जाती है। जिससे मछलियों की वृद्धि तथा विकास होता है। छिछले समुद्र तटों पर प्लैकंटन व काई पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। इनको खाने के लिये तथा अण्डे देने के लिये यहाँ मछलियाँ अधिक मात्रा में आती है।

(2) नदियों के मुहाने : यहाँ प्लैकंटन नामक छोटे जीव के लिये भोजन के आवश्यक तत्व पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं। इसलिये नदियों के मुहानों पर प्लैकंटन अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। नदियों द्वारा कई प्रकार के सड़े–गले पदार्थ भी प्रवाहित कर यहाँ लाये जाते हैं। अतः प्लैकंटन व सड़े–गले पदार्थों को खाने के लिए मछलियाँ नदियों के मुहानों पर आती हैं।

(3) ठण्डी और गर्म जल धाराओं के मिलन स्थल भी मछली प्राप्ति के मुख्य क्षेत्र है। दो भिन्न तापमान वाली जल धाराओं के आपस में मिलने पर मछलियाँ परिवर्तित ताप को सहन नहीं कर पाती है और सतह पर एकत्र हो जाती है। ठण्डी और गर्म जल धाराओं के मिलन स्थल पर प्लैकंटन भी बहुत अधिक वृद्धि और विकास करते हैं अतः भोजन प्राप्ति के लिये मछलियाँ यहाँ पर्याप्त मात्रा में एकत्र हो जाती है।

मत्स्य प्राप्ति के प्रमुख क्षेत्र

(1) समुद्र तटीय मत्स्य क्षेत्र : यह क्षेत्र समुद्रतटीय रेखा से 100 किमी दूर तक खुले समुद्रों की सीमा तक सीमित है। इनमें भी अधिक मछलियाँ 40 किमी तक ही पकड़ी जाती हैं। यहाँ मुख्यतः शार्क, मेकरेल, एंकाकी, ओल, सारडाइन, फाम्फ्रेट, केटफिश, टूना, ईल, हेरिंग, झींगा, पर्न्त, मुलैट, बाम्बे इक मछलियाँ पकड़ी जाती है।

(2) नदी मुख मत्स्य क्षेत्र : गंगा, ब्रह्मपुत्र, हुगली, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा और ताप्ती नदियों के मुहानों पर 6 से 9 माह तक मछलियाँ पकड़ी जाती है। यहाँ पकड़ी जाने वाली मछलियों में पर्च, अप, कार्क, कटला, केटफिश, राहू, हिल्ला, फाम्फ्रेट, पर्लस्पाट आदि मुख्य है।

(3) मीठे जल के मत्स्य क्षेत्र : भारत में मीठे जल की मछलियाँ नदियों, सिंचाई बांधों, तालाबों, झीलों, नहरों नालों और पोखरों आदि में पकड़ी जाती है। गंगा, ब्रह्मपुत्र, दामोदर, महानदी, नर्मदा, ताप्ती, कृष्णा और कावेरी नदियाँ इनकी सहायक नदियों में मुख्यतः मछलियाँ पकड़ी जाती है।

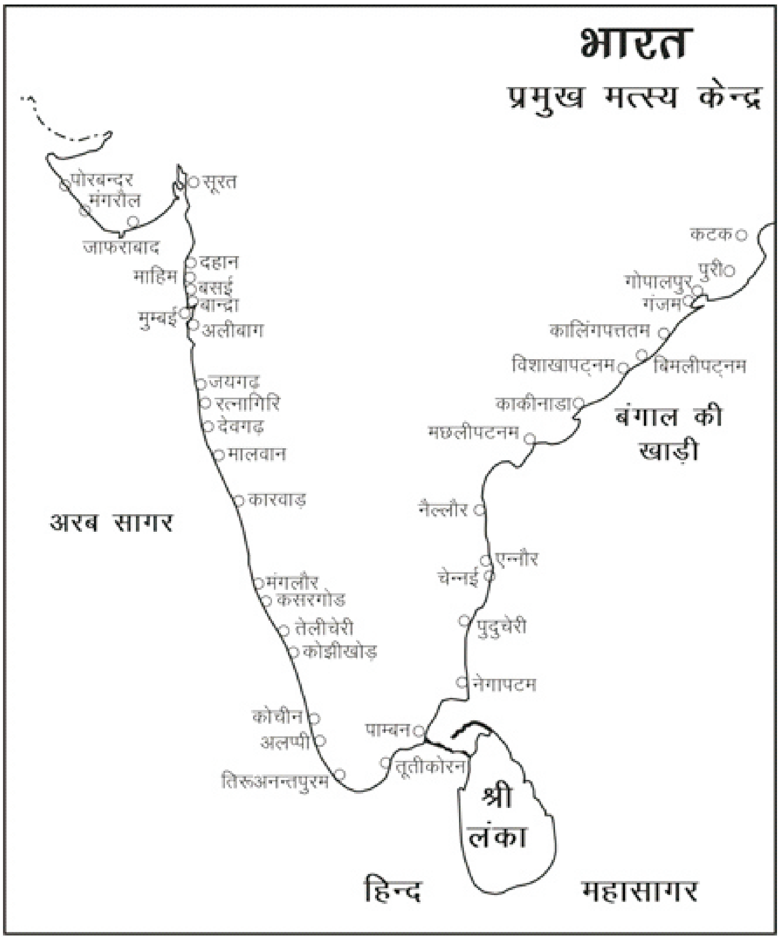

मानचित्र 16.3 : भारत मत्स्य पकड़ने के केन्द्र

(4) मोती मत्स्य क्षेत्र : भारतीय समुद्री क्षेत्रों में कच्छ की खाड़ी, सौराष्ट्र तट, मन्नार की खाड़ी और तमिलनाडु में कुमारी अन्तरीप व पाम्बन द्वीप) में आयस्टार मछलियाँ पाई जाती है। इन मछलियों से बहुमूल्य मोती प्राप्त होते हैं। इन मछलियों को एक विशेष प्रकार के रसायन का इन्जेक्शन लगाया जाता है। इससे कुछ समय पश्चात् इनके शरीर में मोती बन जाता है। जापानी विशेषज्ञों की सहायता से कच्छ व सौराष्ट्र तट पर आयस्टर कल्चर का विकास कर व्यावसायिक मोती फार्मिंग का विस्तार करने की योजना है।

(5) शंख मत्स्य क्षेत्र : भारतीय समुद्र तटों के दलदली तथा बलुई क्षेत्रों में 13 मीटर की गहराई तक विभिन्न आकार–प्रकार की शंख मछलियाँ मिलती है। तमिलनाडु, केरल व गुजरात के सौराष्ट्र में पश्चिमी तट पर अक्टूबर से मई तक शंख मछलियाँ अधिक पकड़ी जाती है। इनके आवरण का उपयोग पूजा–आरती के समय मन्दिरों में बजाये जाने वाले शंखों व अन्य सजावटी सामग्री में किया जाता है।

विकास के प्रयास

(1) मछलियाँ पकड़ने और उत्पादन बढ़ाने के लिये विशेष प्रकार के मत्स्य क्षेत्र पोताश्रय बनाये गये हैं।

(2) भारत में मत्स्य उद्योग के विकास के लिये अपनाये गये उपाय, मछली पकड़ने के लिये आधुनिक बड़ी नौकाओं को काम में लिया जा रहा है।

(3) पकड़ी हुई मछलियों को सुरक्षित रखने के लिए शीत भण्डार तथा परिष्करण व सुखाने की इकाइयाँ स्थापित की गई है।

(4) दक्षिण भारत के प्रमुख रेलमार्गों पर द्रुतगामी मालगाड़ियों में शीत भण्डार युक्त डिब्बे लगाये गये हैं।

(5) मछुआरों को मछली पकड़ने के आधुनिक तरीकों का प्रशिक्षण देने के लिए कोजन, तुतुकुण्डी (तमिलनाडु), सतपारी (महाराष्ट्र), कोच्चि (केरल), विशाखापट्टनम (आन्ध्र प्रदेश) और वेरावल (गुजरात) में प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये हैं।

(6) मछलियों के नये उत्पादों की खोज के लिये भारत सरकार ने मुम्बई, बैरकपुर (कोलकात्ता), मण्डपम (तमिलनाडु) में अनुसंधान शालायें स्थापित की है।

(7) ट्रालरों की सहायता से गहरे समुद्रों मेंनये मत्स्य क्षेत्रों का पता लगाकर मछलियाँ पकड़ी जाती है।

(8) मछुआरों की दशा सुधारने के लिये महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, गुजरात व पंजाब में सहकारी समितियाँ स्थापित कर मछलियों का विक्रय और अनुदान की व्यवस्था की जाती है।

मत्स्य बन्दरगाह

भारत सरकार ने मत्स्य विकास के लिये समुद्र तटों पर मत्स्य बन्दरगाह व पोताश्रय स्थापित किये हैं। यहाँ मछलियाँ पकड़ने, छाँटने, संग्रह हेतु शीत भण्डार निर्यात करने, मौसम व तूफानों की सूचना देने तथा मत्स्य व्यवसाय में काम आने वाली नावों एवं जहाजों को सुरक्षित आश्रय देने का कार्य किया जाता है। पूर्वी तट पर कोलकाता, कटक, पुरी, गोपालपुर, गंजम, कलिंगपट्टनम, विमलीपट्टनम, काकीनाड़ा, मछलीपट्टनम, नैल्लोर, चेन्नई, पाण्डिचेरी, नागपट्टनम, तूतीकोस आदि बन्दरगाह एवं पोताश्रय है। पश्चिमी तट पर पोरबन्दर, मांगरोल, सूरत, माहिम, मुम्बई, जयगढ़, रत्नागिरी, देवगढ़, मालवन, मंगलोर, तेल्लिचेरी, कोजीखोड़, कोचीन (कोच्चि), एलेप्पी, तिरूवनन्तपुरम आदि प्रमुख बन्दरगाह व पोताश्रय है।

उत्पादन व व्यापार

भारत में मछली एवं समुद्री उत्पाद में निरन्तर वृद्धि हो रही है। भारत का मत्स्य उत्पादन में चीन (2012–13 में 570 लाख टन) के बाद दूसरा स्थान है, किन्तु देश में जल संसाधनों के अनुपात में मछली उत्पादन बहुत कम है। सामुद्रिक मछली का सर्वाधिक उत्पादन आन्ध्र प्रदेश (18.08 लाख टन), पश्चिमी बंगाल (14.09 लाख टन), गुजरात (7.86 लाख टन), केरल (6.33 लाख टन), तमिलनाडु (6.20 लाख टन), महाराष्ट्र (5.79 लाख टन), कर्नाटक (5.75 लाख टन), उड़ीसा (4.10 लाख टन) मछली उत्पादक राज्य है। भारत में 2001–02 में 59.60 लाख टन, 2012–13 में 90.4 लाख टन तथा 2013–14 में 95.80 लाख टन मछलियाँ पकड़ी गई।

जल संसाधन

मानव जल का उपयोग पेयजल, दैनिक कार्यों, निर्माण कार्यों, सिंचाई, उद्योग और परिवहन आदि कार्यों में करता है।

जल का महत्त्व इस बात से और अधिक बढ़ जाता है कि यह एक अनिवार्य, सीमित और अति संवेदनशील संसाधन है। मानव का कोई भी कार्य, पर्यावरण की कोई भी प्रक्रिया जल के बिना संभव नहीं है। जल का कोई भी किसी भी प्रकार का विकल्प नहीं है।

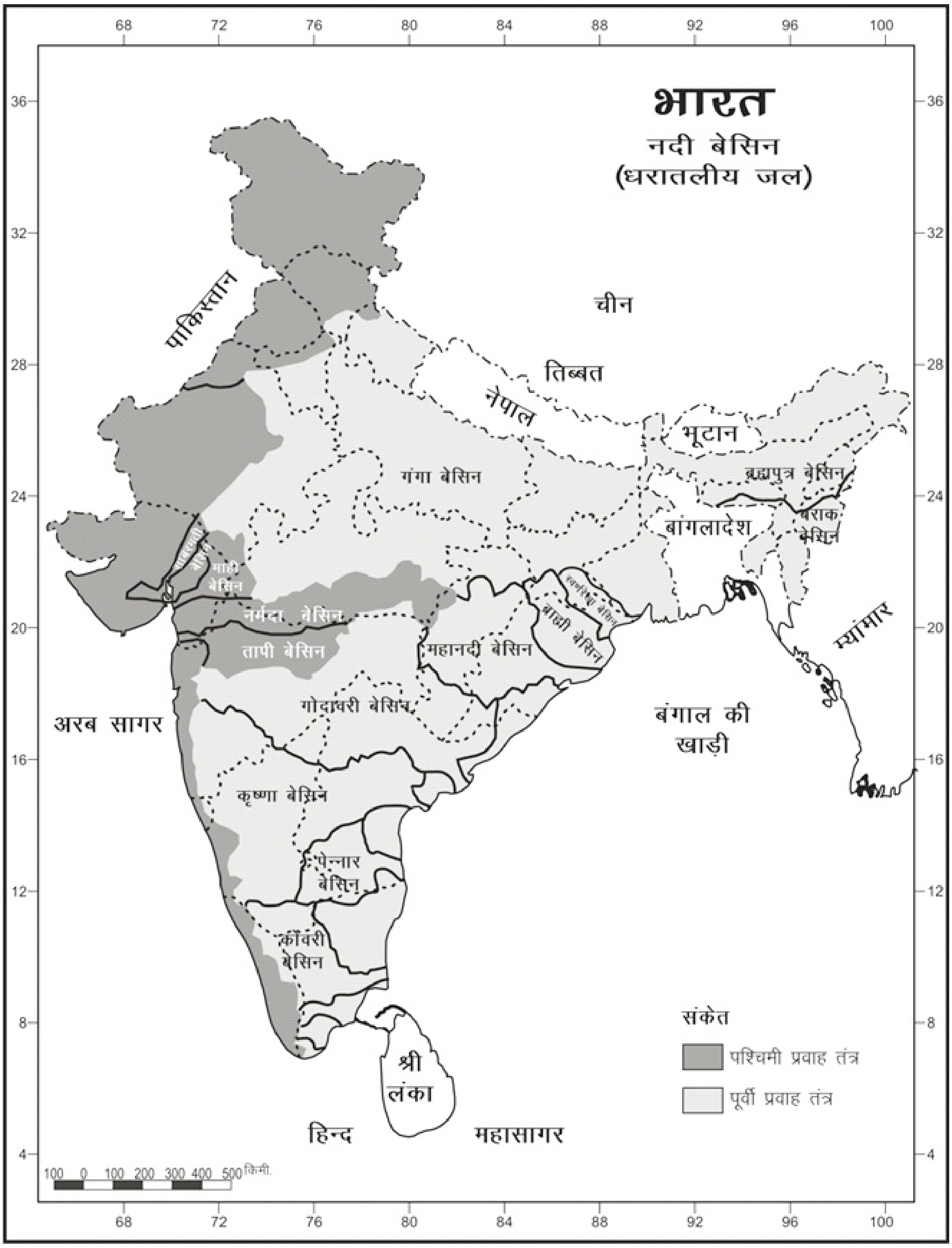

मानचित्र 16.3 : भारत नदी जल बेसिन

मानव के लिए आवश्यक जीवनदायी संसाधनों में वायु के बाद जल का द्वितीय स्थान है। जो प्रकृति का बहुमूल्य उपहार है। जल बिना जीवन असंभव है। जल प्राप्ति का मुख्य स्रोत वर्षा ही है। जो धरातलीय एवं भूमिगत जल के रूप में प्राप्त किया जाता है। भारत में मुख्यतः दक्षिणी– पश्चिमी मानसून द्वारा जून से सितम्बर 3–4 माह में ही ये वर्षा होती है। उत्तर–पूर्वी मानसून द्वारा केवल तमिलनाडू और आन्ध्र प्रदेश के कुछ भागों में ही वर्षा होती है। वर्षा की मात्रा, वितरण और अवधि अनिश्चित होने से प्रति वर्ष वर्षा की अनिश्चितता बनी रहती है।

भारत में जल संसाधन की उपलब्धता

जल एक चक्रीय संसाधन है। जो पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। पृथ्वी का लगभग 71% धरातल पानी से ढका है। जो मुख्यतः लवणीय है। कुल जल का केवल 3% भाग ही अलवणीय है, जिसमें से भी बहुत छोटा भाग ही मानव उपयोग के लिए उपलब्ध है। अलवणीय जल की उपलब्धता स्थान और समयानुसार भिन्न–2 है।

भारत में विश्व के 2.45% भू–भाग पर 4% जल संसाधन एवं 17.5% मानव संसाधन पाया जाता है। भारत की विशालता और स्थलाकृतिक भिन्नता के कारण जल की उपलब्धता में अत्यधिक अन्तर दृष्टिगोचर होता है।

भारत में जल के दो स्रोत है (1) धरातलीय जल एवं (2) भूमिगत जल।

(1) धरातलीय जल

(अ) वर्षा : वर्षा जल का मूल स्रोत है। भारत में 32.87 लाख वर्ग किमी भूमि क्षेत्र पर प्रति वर्ष औसतन 108 सेमी वर्षा होती है। वर्षण (वर्षा + हिम वर्षा) से भारत को 4000 घन किमी जल प्राप्त होता है। इसमें से 1869 घन किमी जल नदियों, झीलों, तालाबों, बाँधों और अन्य जलाशयों द्वारा धरातलीय जल के रूप में प्राप्त होता है। 1341 घन किमी जल वाष्पीकरण और मिट्टी में नमी के रूप में चला जाता है। असिंचित क्षेत्रों में इसी नमी से ही कृषि की जाती है। शेष 790 घन किमी जल भूमि द्वारा सोख लिया जाता है। जो मिट्टी के रन्ध्रों और चट्टानों की दरारों में संचित हो जाता है।

(ब) धरातलीय जल : वह जल जो वर्षण द्वारा नदियों, झीलों, तालाबों, बाँधों और नालों से प्राप्त होता है। धरातलीय जल कहलाता है।

भारत के जल स्रोतों में नदियाँ सर्व प्रमुख है। भारतीय नदियों, झीलों, तालाबों, बाँधों और नालों से लगभग 1869 घन किमी जल राशि प्राप्त होती है। उच्चावच, मिट्टी की प्रकृति और जलवायु की असमानता के कारण यह सम्पूर्ण जल राशि सिंचाई के लिए प्राप्त नहीं हो सकती। इसमें से 690 घन किमी नदी जल सिंचाई के काम आ सकता है। किन्तु संसाधनों के अभाव में कुल क्षमता का लगभग 60% जल ही प्राप्त किया जा रहा है।

आरेख 16.2 : भारत : धरातलीय जल का उपयोग

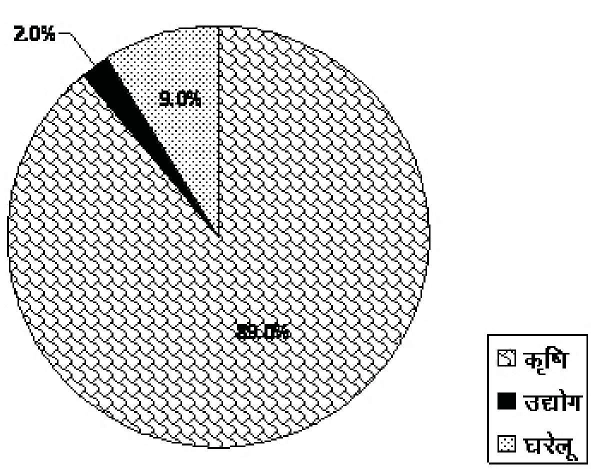

भारतीय नदियों में कुल प्राप्त जल का 60% हिमालय क्रम की नदियों (सिन्धु, गंगा, ब्रह्मपुत्र) में 16% मध्य भारत की नदियों (नर्मदा, ताप्ती और महानदी) में तथा शेष 24% भाग दक्षिणी भारत की नदियों (गोदावरी, कृष्णा, कावेरी) में प्रवाहित होता है। यहाँ भारत की प्रमुख 10 नदियों, उनकी लम्बाई और उनके अपवाह क्षेत्र का विस्तार सारणी 16.1 द्वारा दर्शाया गया है।

सारणी 16.1 : भारत की प्रमुख नदियाँ

क्र.सं.	नदी का नाम	लम्बाई (किमी)	अपवाह क्षेत्र (वर्ग किमी)
1	गंगा (भारत की सबसे लम्बी नदी)	2525	100,062 861452 भारत में
2	यमुना	1376	366,223
3	ब्रह्मपुत्र	2880	580,080 194,413 भारत में
4	सिन्धु	2900 1134 भारत में	11,65,000 453,000 भारत में
5	नर्मदा	1313	98,796
6	ताप्ती	724	65,145
7	महानदी	851	141,589
8	गोदावरी	1465	312,812
9	कृष्णा	1400	258,948
10	कावेरी (दक्षिण की गंगा)	800	81,155

धरातलीय जल का उपयोग

धरातलीय जल का सर्वाधिक उपयोग 89% कृषि कार्यों, 9% घरेलू कार्यों एवं 2% औद्योगिक कार्यों में होता है। जो नदियों, झीलों, तालाबों और नहरों द्वारा प्राप्त किया जाता है।

भारत की समुद्री तट रेखा विशाल व आंशिक कटी फटी है। इसलिए केरल, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में बहुत सी लेगून झीलें बन गई हैं। यद्यपि उन जलाशयों का जल खारा है, किन्तु मत्स्य पालन, नारियल और चावल की कुछ किस्मों की सिंचाई में इस जल का उपयोग किया जाता है।

(2) भूमिगत जल संसाधन

भारत में वर्षण से प्राप्त कुल 4000 घन किमी जल में से केवल 790 घन किमी जल ही भूमिगत जल के रूप में प्राप्त होता है। इसमें 430 घन किमी जल भूमि की ऊपरी सतह तक पहुँचता है।

प्रत्यक्ष रूप से यहीं जल कृषि उत्पादन के लिए उपयोगी है। शेष 360 घन किमी जल धरातल के नीचे प्रवेश्य स्तर तक पहुँचकर कठोर और अभेदन चट्टानों पर एकत्रित होता है। यही जल (बावड़ी), कुएँ व नलकूप खोदकर प्राप्त किया जाता है।

आरेख 10.3 : भारत : भूमिगत जल का उपयोग

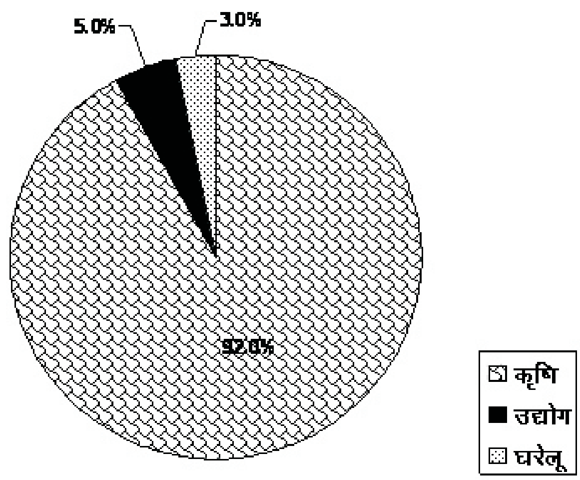

कुल भूमिगत जल 790 घन किमी में से 225 घन किमी जल का ही आर्थिक दृष्टि से उपयोग किया जा सकता है। सिंचाई के लिए अभी तक लगभग 78 घन किमी भूमिगत जल संसाधन का ही उपयोग किया जा सका है।

भूमिगत जल की प्राप्ति सामान्यतः आग्नेय व कायान्तरित कठोर शैलों से नहीं होती है। इसलिए भूमिगत जल की मात्रा प्रदेशानुसार भिन्न है। जैसे तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, दक्षिण–पूर्वी मध्य प्रदेश, कर्नाटक, झारखण्ड के छोटा नागपुर एवं हजारी बाग प्रदेश, उत्तर प्रदेश के झांसी, बांदा और हमीरपुर जिले, राजस्थान के अधिकाँश पूर्वी भागों में जहाँ कठोर चट्टानें मिलती है। इन क्षेत्रों में जल चट्टानों की सन्धियों में मिलता है, इसलिए नलकूप एवं कुएँ, बावड़ी, नदियों, तालाबों के किनारे एवं भराव क्षेत्र के आस–पास ही खोदे जाते हैं।

सतलज–गंगा–ब्रह्मपुत्र बेसिन में रन्ध्र युक्त कोमल चट्टानें होने से 44 प्रतिशत भूगर्भिक जल उपलब्ध होता है इसलिए पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिमी बंगाल में भूमिगत जल के प्रचुर भण्डार होने से कुएँ व नलकूप अधिक संख्या में पाये जाते हैं।

भूमिगत या भूगर्भिक जल का उपयोग

भूमिगत जल का सर्वाधिक उपयोग 92% कृषि कार्यों, 3% घरेलू कार्यों एवं 5% औद्योगिक कार्यों में होता है।

सिंचाई एवं सिंचाई के साधन

वर्षा की कमी या अभाव के कारण शुष्क मौसम में खेतों में कृत्रिम ढंग से जल की आपूर्ति की क्रिया को सिंचाई कहते हैं।

जो साधन सिंचाई के लिए खेतों में जल उपलब्ध करवाते हैं, सिंचाई के साधन कहलाते हैं। जैसे नदियाँ, नहरें, झीलें, तालाब, कुएँ, नलकूप आदि।

जिन यंत्रों (उपकरणों) द्वारा नदियों, नहरों, झीलों, बाँधों, तालाबों, नालों, नलकूपों, कुओं आदि से पानी बाहर निकाल कर सिंचाई की जाती है, सिंचाई के उपकरण कहलाते हैं। जैसे– रहंट, चड़स, ढेकुली, डीजल पम्प, विद्युत पम्प आदि।

भारत में सिंचाई के लिए जल संसाधन की आवश्यकता भारत में निम्नलिखित कारणों से सिंचाई की आवश्यकता है।

- जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि से उत्पादन की अधिक आवश्यकता।
- वर्षा की अनिश्चितता, अनियमितता एवं बौछार के रूप में होने के करीएर।
- वर्षा का असमान वितरण एवं मौसमी होने से।
- गहन कृषि एवं बहुफसलीकरण व्यवस्था के लिए।
- कुछ फसलों के लिए अधिक जल की आवश्यकता होती है।
- सूखे की समस्या के समाधान के लिए।
- नये व संकर बीजों के लिए अधिक एवं समय पर जल की आवश्यकता होती है।
- व्यावसायिक फसलों के उत्पादन में वृद्धि के लिए सिंचाई एक मात्र साधन है।
- शुष्क क्षेत्रों में फसलोत्पादन के लिए।
- मिट्टी की प्रकृति व चारागाह के विकास के लिएभी सिंचाई उपयोगी ।

इतिहास : भारत में प्राचीन काल से ही सिंचाई के विभिन्न साधन काम में लिए जाते रहे हैं। वैदिक काल में नहर के लिए कुल्या और कुएँ के लिए अवर शब्द प्रयुक्त किया गया है। मेगस्थनीज के विवरणानुसार चन्द्रगुप्त के राज्यपाल पुष्प गुप्त ने

पर्वतीय नदी पर गिरनार (गुजरात) में बाँध बनाकर सुदर्शन नामक झील बनवाई थी। कालान्तर में सम्राट अशोक महान् ने इस झील से नहरें भी बनवाई थी। चाणक्य ने ईसा पूर्व गुप्त काल में कहा था कि सेतुबन्ध कृषि के आधार होते हैं। इनके नहीं होने से बाढ़े आ जाती है तथा वे गाँवों को बहा कर ले जाती है। इससे जनधन की बड़ी हानि होती है।

भारत में कावेरी नदी पर ईसा की दूसरी शताब्दी में सिंचाई के लिए 300 मीटर लम्बा, 12 से 18 मीटर चौड़ा तथा 5 से 6 मीटर ऊँचा बाँच बनाया गया था। जो संसार के प्राचीनतम बाँधों में से एक है।

देश के वर्तमान में सही अर्थों में कुल कृषि भूमि के लगभग 60 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध है। उत्तरी भारत में नहरों, कुओं और नलकूपों से तथा दक्षिणी भारत में तालाबों और नहरों द्वारा सिंचाई की जाती है।

भारत में सिंचाई के धरातलीय एवं भूमिगत जल संसाधनों का निम्न प्रकार वर्गीकरण किया जा सकता है।

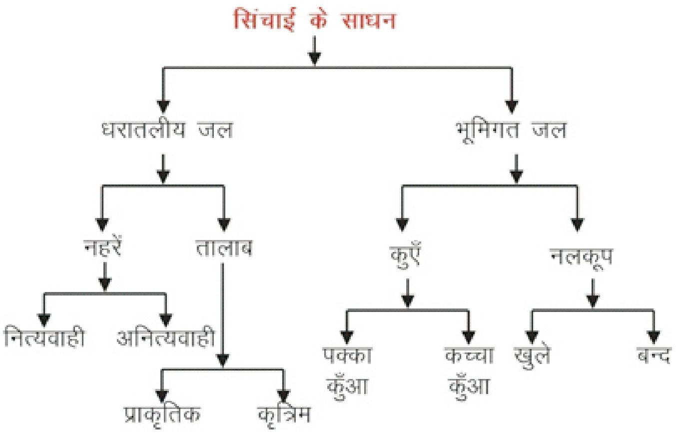

रेखाचित्र 16.11 : सिंचाई के साधन

जल समस्या

निरन्तर जनसंख्या वृद्धि से जल की प्रति व्यक्ति उपलब्धता दिन–प्रतिदिन कम होती जा रही है। उपलब्ध जल संसाधन औद्योगिक, कृषि और घरेलू अपशिष्ट पदार्थों के निस्सरण से प्रदूषित होता जा रहा है। जल प्रदूषण से उपयोगी जल संसाधनों की उपलब्धता निरन्तर सीमित होती जा रही है।

जल की उपलब्धता का ह्रास

अवांछित पदार्थों से रहित जल शुद्ध जल कहलाता है। विषैले पदार्थों, सूक्ष्म जीवों, रासायनिक पदार्थों और अन्य अपशिष्ट पदार्थों के मिलने से जल अपनी स्वाभाविक गुणवत्ता खोकर प्रदूषित होने से मानव के लिए अनुपयोगी हो जाता है। इसे जल प्रदूषण अथवा जल की गुणवता में ह्रास कहते हैं। विषैले पदार्थों के निरन्तर नदियों, नालों, झीलों, तालाबों और समुद्रों में मिलने से जल–प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। जल के गुणों में कमी आने से जलीय तंत्र प्रभावित होता है। अत्यधिक प्रदूषक भीतर तक पहुँचकर भूमिगत जल को भी प्रदूषित करते हैं। भारत में गंगा–यमुना जैसी पावन नदियाँ भी अत्यधिक प्रदूषित नदियों का रूप ले चुकी है।

जल संरक्षण और प्रबन्धन

अलवणीय जल की बढ़ती माँग और घटती आपूर्ति से सतत् पोषणीय विकास के लिए इस महत्त्वपूर्ण जीवनदायी संसाधन के संरक्षण और प्रबन्धक की आवश्यकता बढ़ गई है। सागरों महासागरों का लवणीय जल अत्यधिक लागत के कारण विलवणीय कर प्राप्त करना अत्यधिक कठिन कार्य है। भारत को प्रभावशाली नीतियाँ और कानून बनाकर जल संरक्षण हेतु प्रभावशाली कदम उठाने है। अतः जल की बचत, जल प्रदूषण से बचाव, जल संभरण विकास, वर्षा जल संग्रहण, जल के पुनर्चक्रण और पुनः उपयोग, सिंचाई की नई पद्धति, कम जल चाहने वाली फसलें तथा लम्बे समय तक जल की आपूर्ति के लिए जल के संयुक्त उपयोग को बढ़ाने की आवश्यकता है। जल संरक्षण हेतु सुझावों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है–

(1) जल प्रदूषण का निवारण : पृथ्वी पर उपलब्ध जल संसाधन की गुणवता निरन्तर तीव्र गति से घट रही है। कृषि कार्यों में जैविक कीटनाशकों व उर्वरकों का अधिक उपयोग, रासायनिक कीटनाशकों व उर्वरकों का कम उपयोग, प्रदूषित जल का शोधन कर जल स्रोतों में निकासी, उद्योगों के प्रदूषित जल का उप उत्पादकों में उपयोग, उन्नत व परिष्कृत तकनीक आदि का उपयोग कर जल प्रदूषकों में बहुत प्रभावशाली ढंग से कमी लाई जा सकती है।

(2) जल का पुनर्चक्रण और पुनः उपयोग : इस तकनीक द्वारा अलवणीय जल की उपलब्धता और गुणवत्ता को सुधारा जा सकता है। कम गुणवत्ता वाले शोधित अपशिष्ट जल का उपयोग शीतलन व अग्निशमन के लिए किया जा सकता है। नगरीय क्षेत्रों में स्नान, बर्तन धोने तथा वाहन धोने में प्रयुक्त जल का उपयोग बागवानी में किया जा सकता है। इससे अच्छी गुणवत्ता वाले जल का पेयजल के रूप में संरक्षण होगा। पुनर्चक्रण विधि द्वारा प्राप्त सीमित किन्तु पुनः पूर्ति योग्य जल की उपादेयता व्यापक है।

(3) जल संभरण प्रबन्धन : जल संभर प्रबन्धन का आशय मुख्य रूप से वर्षा, धरातलीय व भौम जल संसाधनों के दक्ष प्रबन्धन से है। इसके अन्तर्गत बहते जल को रोकना बाँधों, झीलों, तालाबों और पुनर्भरण कुओं आदि के द्वारा भौम जल का संचयन और पुनर्भरण सम्मिलित है। जल प्रबन्धन के अन्तर्गत जल संभरण और मानव सहित समस्त संसाधनों के संरक्षण पुर्नउत्पादन और विवेकपूर्ण विदोहन को सम्मिलित किया गया है।

केन्द्रीय, राज्य सरकारों और गैर सरकारी संगठनों द्वारा बहुत से जल संभरण विकास और प्रबन्धन कार्यक्रम चलाये आ रहे हैं। ग्रामीण जनसंख्या को पेयजल, सिंचाई, मत्स्यपालन और वनरोपण के लिए संरक्षण हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 'हरियाली' जल संभरण विकास परियोजना संचालित की गई है।

राजस्थान के अलवर में अखारी पानी संसद और आन्ध्र प्रदेश में नीरू–मीरू (जल और आप) कार्यक्रम द्वारा जन–सहयोग से अन्तःस्त्रवण तालाब व ताल (जोहड़) की खुदाई और बाँध बना कर जल संग्रहण संरचना बनाई गई है। ऐसे ही तमिलनाडु में घरों में जल संग्रहण संरचना बनाये बिना इमारत निर्माण नहीं किया जा सकता है।

कुछ क्षेत्रों में जल संभरण विकास परियोजनाएँ पर्यावरण व अर्थ व्यवस्था का कायाकल्प करने में सफल हुई है। अतः एकीकृत जल संसाधन प्रबन्धन उपागम द्वारा जल की सतत् उपलब्धता निश्चित की जा सकती है।

(4) वर्षा जल संचयन : वर्षा जल संचयन विभिन्न उपयोगों के लिए वर्षा के जल को रोकने और संग्रहण करने की विधि है। इसका उपयोग भूमिगत जल स्रोतों के पुनर्भरण के लिए किया जाता है। इसमें पानी की प्रत्येक बूंद संरक्षित करने के लिए वर्षा जल को नलकूपों, गढ्ढों और कुओं में एकत्र किया जाता है। इससे पानी की उपलब्धता बढ़ने से भूमिगत जलस्तर ऊँचा बना रहता है।

जल संचयन भूमिगत जल में उपलब्ध अलवणीयता कम कर उसकी गुणवत्ता बढ़ाता है, मृदा अपरदन और बाढ़ को रोकता है। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में परम्परागत रूप से वर्षा जल झीलों, तालाबों, ताल–तलैया, कुण्डों और टांकों में संचित किया जाता रहा है। यह कम मूल्य आधारित परिस्थितिकी विधि है। राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही जल स्वावलम्बन योजना के अन्तर्गत कई ग्रामीण क्षेत्रों में जल संचयन, संरक्षण के उल्लेखनीय कार्य संपादित हुए हैं।

खनिज संसाधन

वे सभी प्राकृतिक पदार्थ जो भूमि को खोदकर (खनन द्वारा) प्राप्त किये जाते हैं खनिज कहलाते हैं। जैसे– लोहा, ताँबा, चाँदी, संगमरमर, कोटा स्टोन, कोयला, पेट्रोलियम आदि। खनिज प्राकृतिक रवेदार (क्रिस्टलीय) निश्चित रासायनिक संगठन और विशिष्ट संरचना वाले पदार्थ हैं। कुछ खनिज एक ही तत्व से निर्मित सामान्य संगठन वाले होते हैं। जैसे– कार्बन, हीरा, आदि तो अधिकाँश खनिज दो तत्वों के संघटन वाले होते हैं। जैसे सल्फर, लोहा, खनिजों की विशेषताएँ होती है। जैसे रंग, आभा, घनत्व, रवेदार (क्रिस्टलीय), कठोरता, पारदर्शिता, संरचना, भार, रासायनिक संगठन आदि।

खनिज पदार्थ संसार के सर्वाधिक मूल्यवान एवं प्राकृतिक संसाधनों में महत्त्वपूर्ण निःशुल्क उपहार है। घात्विक खनिजों से मशीनों का निर्माण, धात्विक और अधात्विक खनिजों से आवासों का निर्माण, खनिज ईंधन से मशीनों को चलाने के लिए शक्ति प्राप्त होती है। अतः किसी देश की सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक, प्रगति के मुख्य आधार स्तम्भ खनिज ही है।

भारतीयों को प्राचीन काल से ही खनिजों का ज्ञान था। ताम्र युग और काँस्य युग इसके प्रमाण है। भारत में आज़ादी में 1947 तक 22 प्रकार के खनिजों का खनन किया जाता था। आज इनकी संख्या बढ़कर 125 हो गई है। इनमें 35 खनिज आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। अभी तक मानव को लगभग 1600 प्रकार के खनिजों का ज्ञान है। खनिजों की आत्म निर्भरता में संयुक्त राज्य अमेरिका प्रथम, भारत द्वितीय एवं रूस तृतीय स्थान पर है।

भारत में खनिजों का वितरण

भारत में खनिज प्रमुखतः 6 मेखलाओं में पाये जाते हैं।

(1) झारखण्ड–उड़ीसा–पश्चिमी बंगाल मेखला : यह मेखला भारत के उत्तरी पूर्वी पठारी प्रदेश में छोटा नागपुर, उड़ीसा पठार, पं. बंगाल और छत्तीसगढ़ के कुछ भाग में विस्तृत है। यहाँ लौहा, अयस्क, कोयला, मैंगनीज, अभ्रक, ताँबा, इल्मेनाइट, बाक्साइड, क्रोमाइट, फास्फेट व चूना पत्थर आदि के विशाल भण्डार है।

(2) मध्य प्रदेश–छत्तीसगढ़–आन्ध्र प्रदेश–महाराष्ट्र मेखला : इस मेखला में लौह अयस्क, मैंगनीज, बॉक्साइट, चूना पत्थर, अभ्रक, ताम्बा, ग्रेनाइट व हीरे के विशाल भण्डार है।

(3) कर्नाटक–तमिलनाडु–मेखला : इस मेखला में सोना, लौहा, अयस्क, मैंगनीज, ताँम्बा, बॉक्साइट, लिग्नाइट, कोयला,

चूना पत्थर, जिप्सम, क्रोमाइट आदि के विशाल भण्डार है।

(4) राजस्थान–गुजरात मेखला : इस मेखला में चाँदी, सीसा, जस्ता, अभ्रक, मैंगनीज, ताम्बा, लिग्नाइट, कोयला, पन्ना, संगमरमर, जिप्सम, एस्बेस्टौस, नमक, मुल्तानी मिट्टी, येरेनियम, बेरेलियन, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस के भण्डार हैं।

(5) केरल मेखला : इस मेखला में मोनोजाइट, जिरकन, इल्मेनाइट, गारनेट, चिकनी मिट्टी आदि खनिज पाये जाते हैं।

(6) हिमालय–मेखला : इस मेखला में ताँबा, सीसा, जस्ता, निकिल, सुरमा, कोबाल्ट, टंगस्टन, सोना, चाँदी, क्रोमाइट और बेरेलियम आदि खनिज पाये जाने की पर्याप्त संभावनाएँ है।

खनिजों का वर्गीकरण

खनिजों के वर्गीकरण का विस्तृत अध्ययन आप इसी पुस्तक के खण्ड ''अ'' के अध्याय सात में कर चुके हैं, यहाँ केवल उनकी संक्षिप्त जानकारी दी जा रही है।

1. धात्विक खनिज

(अ) लौह खनिज – लौहा, मैंगनीज, टंगस्टन, क्रोमाइट, निकिल, आदि।

(ब) अलौह खनिज – ताम्बा, सीसा, जस्ता, चाँदी, सोना, बॉक्साइट, इल्मेनाइट, बेराइट, मेग्नेसाइट, एज्युमिनियम, रांगा (टिन) आदि।

2. अधात्विक खनिज : अभ्रक, एस्बेस्टोस, पाइराइट, नमक, जिप्सम, हीरा, पत्थर, रॉक फास्फेट, चूना पत्थर, डोलोमाइट, काँच बनाने की बालू और विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ।

(3) खनिज ईंधन या शक्ति संसाधन : कोयला, खनिज तेल, और अणुशक्ति वाले खनिज जैसे– यूरेनियम, थोरियम, इल्मेनाइट, बेरिलियम, जिरकन, सुरमा और ग्रेफाइट आदि।

यहाँ धात्विक व अधात्विक खनिजों का विवरण दिया जा रहा है।

(1) लौह अयस्क (Iron Ore) : वर्तमान यांत्रिक युग में लोहा किसी देश के आर्थिक विकास की धुरी है। सुई व कील से लेकर फर्नीचर, विशालकाय इंजिन, वाहन, मशीनें, जलपोत विभिन्न संयन्त्र और भवन निर्माण सामग्री आदि लोहे से बनाई जाती है। लोहे के अत्यधिक उपयोग के कारण ही वर्तमान युग को लौह–इस्पात युग कहा जाता है। लौहे की कच्ची धातु लौह अयस्क कहलाती है। भारत में यह काले या गेरू रंग में धारवाड़ युग की जलज और आग्नेय चट्टानों से प्राप्त होती है। लौह अयस्क अशुद्ध अवस्था में मिलता है, जिसे धमन भट्टियों में पिघलाकर साफ किया जाता है। साफ की हुई लोहे की ठण्डी धातु को कच्चा लोहा कहते हैं। लोहे में मैंगनीज, टंगस्टन और निकिल आदि मिलाकर विभिन्न प्रकार का इस्पात तैयार किया जाता है।

लौह अयस्क के प्रकार : लौह अयस्क में लोहे की मात्रा अलग–अलग होती है। जो 25 से 72 प्रतिशत तक होती है। लौह अयस्क में लोहे की मात्रा के अनुसार इसके चार प्रकार हैं, किन्तु 25 प्रतिशत से अधिक लौह अयस्क की मात्रा वाली धातु का खनन ही लाभप्रद होता है।

(अ) मैग्नेटाइट अयस्क : इसमें लोहे की मात्रा 72 प्रतिशत तक होती है। लौह धातु की अधिकता के कारण इसका रंग काला या गहरा भूरा होता है। यह सर्वोत्तम किस्म का लौह अयस्क है। जो आग्नेय शैलों में पाया जाता है। भारत में मैग्नेटाइट लौह अयस्क के अनुमानित भण्डार लगभग 340.8 करोड़ टन है।

(ब) हेमेटाइट अयस्क : इसमें लोहे की मात्रा 60 से 70 प्रतिशत तक होती है। इसका रंग लाल या भूरा होता है। इसमें लोह धातु ठोस कणों या चूर्ण के रूप में पाई जाती है। यह लौह अयस्क धारवाड़ या कुडप्पा समूह से प्राप्त होती है। भारत में हेमेटाइट लौह अयस्क के अनुमानित भण्डार 10.05 अरब टन है।

(स) लिमोनाइट अयस्क : इसमें लोहे की मात्रा 30 से 60 प्रतिशत तक होती है। इसका रंग कुछ पीलापन लिए होता है। यह निम्न कोटि का अयस्क है और परतदार चट्टानों में पाया जाता है।

(द) सिडेराइट अयस्क : इसमें लोहे की मात्रा 10 से 48 प्रतिशत तक होती है। इसका रंग राख जैसा या हल्का भूरा होता है। लौह अंश की कमी के कारण यह घटिया किस्म की लौह अयस्क है। इसलिए इसका खनन अनार्थिक माना जाता है।

लौह अयस्क प्राप्ति क्षेत्र

(1) कर्नाटक : यह राज्य भारत के लौह अयस्क उत्पादन में 24.80 प्रतिशत के साथ प्रथम स्थान है। यहाँ पर कादर (बाबाबदून की पहाड़ियाँ), बेलारी, हास्पेट, शिमोगा, धारवाड़, तुमकुर, चिकमंगलूर, चित्रदुर्ग आदि प्रमुख लौह अयस्क उत्पादक जिले हैं। राज्य में हेमेटाइट किस्म की 55 से 65 प्रतिशत लौह अयस्क वाली धातु निकाली जाती है। यहाँ लौह अयस्क के अनुमानित भण्डार 1.45 अरब टन है।

(2) उड़ीसा : देश में लौह अयस्क उत्पादन में 22.13 प्रतिशत के साथ देश में दूसरा स्थान है। यहाँ पर मयूर भंज (गुरूम हिसानी, सुलेमात और बादाम पहाड़), सुन्दरगढ़, बोनाई, सम्बलपुर व कटक महत्त्वपूर्ण लौह अयस्क उत्पादन जिले हैं। यहाँ हेमेटाईट

किस्म की 58 से 60 प्रतिशत तक अयस्क वाली धातु पाई जाती है।

(3) छत्तीसगढ़ : यह राज्य 19.97 प्रतिशत उत्पादन करके तीसरा स्थान रखता है। यहाँ बस्तर और दुर्ग सबसे महत्त्वपूर्ण लौह अयस्क उत्पादक जिले हैं। जबलपुर, राजगढ़, बिलासपुर, सरगुजा, बालासर आदि अन्य उत्पादक जिले हैं। यहाँ हेमेटाइट किस्म की 50 से 66 प्रतिशत तह लौह अयस्क वाली धातु निकाली जाती है।

(4) गोवा : देश में 18.05 प्रतिशत लौह अयस्क उत्पादन कर चौथे स्थान पर है। यहाँ मिरना, अदोल पाले ओनडा, कुडनम, प्रिंससलेम, आदि प्रमुख उत्पादक जिले हैं। लोहे को साफ करके मारमगोवा बन्दरगाह से जापान को निर्यात कर दिया जाता है। यहाँ घटिया किस्म का लोहा निकाला जाता है जिसमें लौह अंश की मात्रा 50 प्रतिशत तक होती है।

(5) झारखण्ड : देश में लौह अयस्क उत्पादन में इसका 14.11 प्रतिशत के साथ पाँचवाँ स्थान है। यहाँ सिंह भूमि (नोआमण्डी) मातभूमि, हजारी बाग आदि प्रमुख लौह अयस्क उत्पादन जिले हैं।

(6) महाराष्ट्र : यहाँ चन्द्रपुर जिले में पीपलगाँव, लौहार, देवलगाँव तथा रत्नागिरी जिले में लौहा अयस्क पाया जाता है।

(7) आन्ध्र प्रदेश : यहाँ आदिलाबाद, करीमनगर, निजामाबाद, कृष्णा, कुर्नून, कुडप्पा, गुन्टूर, नैलोर, चित्तूर, बारगंल आदि प्रमुख लौह उत्पादक जिले हैं। यहाँ मैग्नेटाइट किस्म की 65 से 72 प्रतिशत अंश वाली लौह अयस्क निकाली जाती है।

(8) तमिलनाडु : यहाँ सलेम चिरूचनापल्ली, अकार्ट, नीलगिरी, धर्मपुरी प्रमुख लौह अयस्क उत्पादक जिले हैं। यहाँ 65 से 70 प्रतिशत अंश वाली हेमेटाइट प्रकार की धातु निकाली जाती है।

(9) अन्य राज्य : बिहार, पं. बंगाल, जम्मू और कश्मीर, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, गुजरात, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य में भी लौह अयस्क निकाला जाता है।

उत्पादन एवं व्यापार

भारत में एशिया के विशालतम लौह अयस्क के संचित भण्डार हैं। भारत में निर्यात के लिए लौह अयस्क उड़ीसा, कर्नाटक और गोवा से निकाला जाता है। भारत में लौह अयस्क का उत्पादन 2001–02 में 7.40 करोड़ टन, 2010–11 में 22.50 करोड़ टन, 2013–14 में 15.24 करोड़ टन लौह अयस्क का उत्पादन किया गया। 2010–11 में 21,416 करोड़ रूपये मूल्य का लौह अयस्क निर्यात किया गया। मारमांगोवा, कोलकाता (हल्दिया), विशाखापट्टनम, पारद्वीप, चेन्नई, मंगलोर आदि बन्दरगाहों से लौह अयस्क का निर्यात किया जाता है। लौह अयस्क का सर्वाधिक निर्यात मारमांगोवा बन्दरगाह से किया जाता है। इसकी निर्यात क्षमता 80 लाख टन है। प्रमुख अयस्क देशों में जापान प्रमुख है। जो देश के निर्यात का 80 प्रतिशत आयात करता है। अन्य उत्पादक देशों में चेकोस्लोवाकिया, जर्मनी, रूमानिया, इटली, पोलेण्ड, सर्बिया, बेल्जियम, हंगरी आदि यूरोपीय देशों के साउथ कोरिया सम्मिलित है।

ताँबा

मानव सभ्यता के विकास में ताँबे का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। वर्तमान में ताँबे का उपयोग तारों, विद्युत उपकरणों (विद्युत मोटरें, ट्रान्सफर व जेनरेटर आदि), नलियाँ (पाईप) और बर्तन बनाने में होता है। ताँबा शुद्ध रूप से बहुत लचीला होने से आयात वर्धनीय एवं तन्यता युक्त धातु है। आभूषणों को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए ताँबा स्वर्ण के साथ मिलाया जाता है। यह अन्य धातुओं के साथ मिलकर अनेक मिश्र धातुएँ बनाता है। जैसे ताँबा और एल्यूमिनियम से पीतल, ताम्बा और राँगा से काँसा, ताँबा और निकिल से जर्मन सिल्वर, ताँबा और सोना से रोल्ड गोल्ड बनाया जाता है।

वर्तमान में विश्व में 60 प्रतिशत ताँबे का उपयोग विद्युत निर्माण एवं सम्बन्धित उद्योगों में होता है। विश्व में ताँबा कम मात्रा में पाया जाता है। इसलिए इसके प्रति स्थापक के रूप में एल्यूमिनियम का उपयोग बढ़ने से अलौह धातुओं में ताँबे का स्थान एल्यूमिनियम के बाद दूसरा हो गया है। भारत में ताँबे के भण्डार बहुत कम है। जो अनुमानतः 71.25 करोड़ टन है। इसमें लगभग 94 लाख टन ताँबा धातु संचित होने का अनुमान है। यहाँ ताँबा अयस्क में धातु की मात्रा 0.8 प्रतिशत से 8 प्रतिशत तक पाई जाती है।

प्राप्ति क्षेत्र : भारत के प्रमुख ताँबा उत्पादक राज्य निम्नलिखित है।

(1) मध्य प्रदेश : राज्य का भारत में ताँबा उत्पादन में प्रथम स्थान है। यहाँ 56.86 प्रतिशत ताँबे का उत्पादन होता है। मुख्य ताँबा उत्पादक जिले बालाघाट (मल जखण्ड) तथा तारे गाँव तथा बेतूल हैं। यहाँ 848 लाख टन ताँबे के भण्डार है, जिनमें 10.06 लाख टन शुद्ध ताँबा उपस्थित है।

(2) राजस्थान : यह भारत में दूसरा बड़ा ताँबा उत्पादक राज्य है। यहाँ झुंझुनू (खेतड़ी, सिंघाना), मुख्य उत्पादक जिला है।

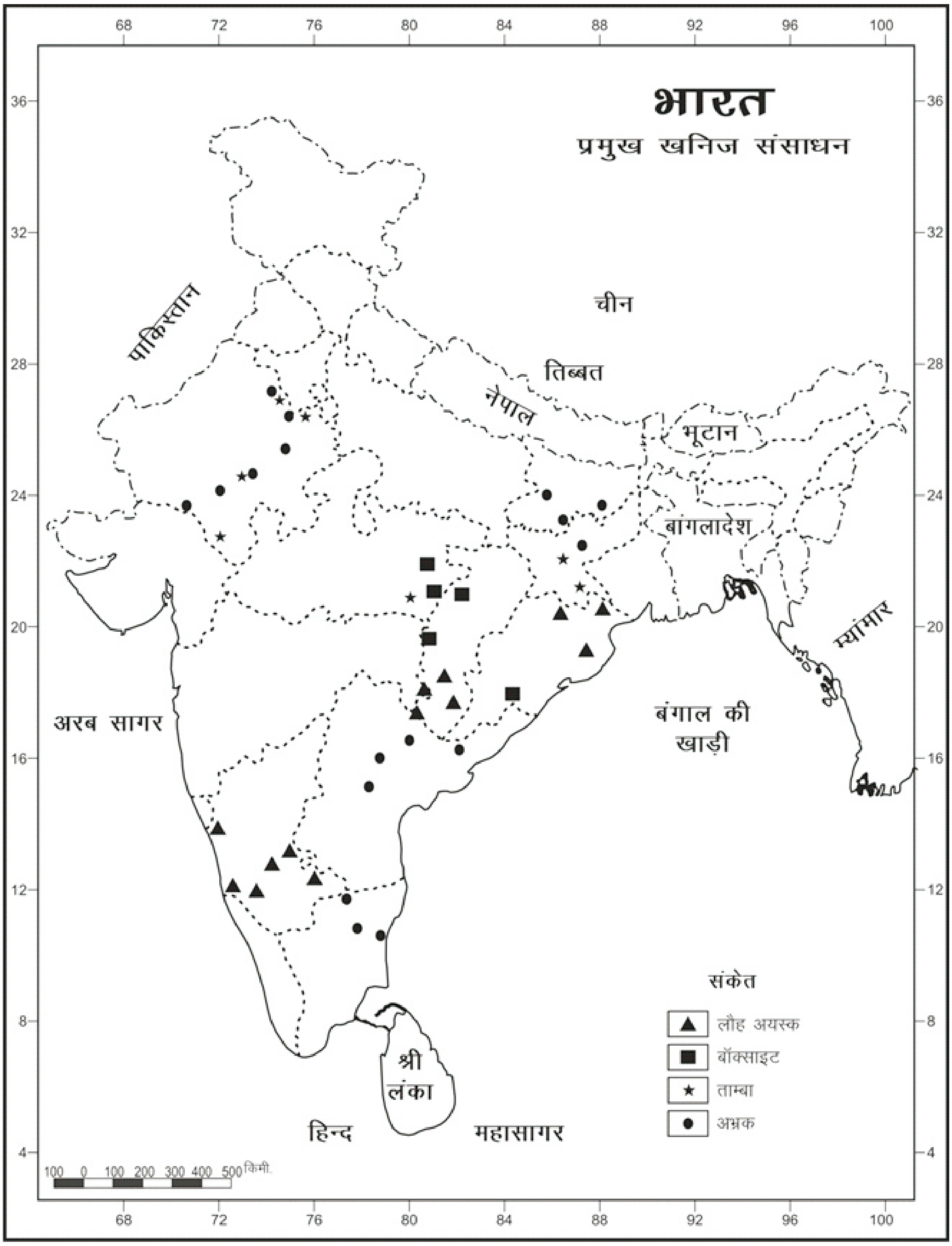

मानचित्र 16.4 : भारत प्रमुख खनिज संसाधन

यहाँ हिन्दुस्तान कॉपर कॉरपोरेशन खेतड़ी द्वारा ताँबा अयस्क निकालने व ताँबा शोधन का कार्य किया जाता है। कारखाने की ताँबा संद्रावक क्षमता 40 हजार टन वार्षिक है। सीकर, उदयपुर, बाँसवाड़ा, दौसा, भीलवाड़ा में नये भण्डारों का पता चला है।

3) झारखण्ड : यह राज्य भारत का 4.0 लाख टन ताँबा अयस्क उत्पादन करता है। यहाँ सिंहभूमि, हजारी बाग, संथाल, परगना, मानभूमि आदि प्रमुख उत्पादक जिले हैं। यहाँ भारत का लगभग 4 प्रतिशत ताँबा निकला जाता है। झारखण्ड में ताम्बा अयस्क निकालने का कार्य इण्डियन कॉपर कॉरपोरेशन 1924 से कर रहा है। इसी संस्था द्वारा 1930 में ताँबा निकाला जाता है तथा ताम्बे की चादरें बनाई जाती है।

अन्य क्षेत्र : सिक्किम, आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पं. बंगाल, मणिपुर, जम्मू और कश्मीर आदि राज्यों में भी ताँबे के भण्डार पाये जाते हैं।

उत्पादन एवं व्यापार

भारत की ताँबे की घरेलू औद्योगिक आवश्यकता की पूर्ति

के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जापान, पूर्वी अफ्रीका तथा जाम्बिया से ताँबे का आयात करता है। भारत में ताँबा अयस्क का उत्पादन 1990–91 में 52.49 लाख टन, 2004–05 में 29.31 लाख टन तथा 2009–10 में 32.38 लाख टन हो गया।

एल्यूमिनियम

बॉक्साइट एल्यूमिनियम का मुख्य स्रोत है। बॉक्साइट से एल्यूमिना औनर एल्यूमिना से एल्यूमिनियम बनाया जाता है। बॉक्साइड विशिष्ट खनिज (गुलाबी रंग) है, जो मिट्टी जैसा दिखता है। बॉक्साइड में धातु का अंश 84 प्रतिशत तक होता है। एल्युमिनियम एक बहु उपयोगी हल्की लचीली मुलायम और श्रेष्ठ विद्युत चालक है। इनमें जंग नहीं लगता।

उपयोग : एल्यूमिनियम का उपयोग बिजली के तार प्रक्षेपात्र, वायुयान, मिशाइल, जहाजों के पेदों की चादर, कलपुर्जे, घरेलू बर्तन, इमारतों के दरवाजें, खिड़कियाँ और शटर आदि बनाने में किया जाता है।

प्राप्ति क्षेत्र

(1) उड़ीसा : भारत में बॉक्साइड उत्पादन में 50.16 प्रतिशत (49.04 लाख टन) उत्पादन के साथ–साथ प्रथम स्थान पर है। कालाहाण्डी, सम्बलपुर आदि अग्रणी उत्पादक जिले हैं। यहाँ बोलनगीर और कोरापुर जिलों के गंधमदन पठार पर पाये गये नये क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ रहा है। यहाँ बॉक्साइट की मात्रा 62.5 प्रतिशत तक मिलती है।

(3) गुजरात : यहाँ हाल्डार, खेड़ा, सांबरकाँटा, सूरत, जामनगर, भावनगर, पोरबन्दर आदि मुख्य उत्पादक जिले हैं। राज्य में बॉक्साइट के कुल अनुमानित भण्डार 5 करोड़ टन है। यहाँ बॉक्साइट की मात्रा 58 से 60 प्रतिशत पायी जाती है।

(4) झारखण्ड : भारत में बॉक्साइट उत्पादन में 11.87 प्रतिशत (11.61 लाख) टन के साथ द्वितीय स्थान पर है। यहाँ राँची, पालामऊ, गिरहिड, सुमला, शाहबाद, लोहारदगा आदि प्रमुख उत्पादक जिले हैं। झारखण्ड में 8 करोड़ टन उत्तम किस्म में बॉक्साइड के भण्डार है। यहाँ धातु की मात्रा 50 से 63 प्रतिशत तक है।

(4) महाराष्ट्र : भारत में बॉक्साइट उत्पादन में यहाँ कोल्हापुर, कोलाबा, थाणे, रत्नागिरी, सतारा, पुणे, आदि प्रमुख उत्पादक जिले हैं। महाराष्ट्र में बॉक्साइट के अनुमानित भण्डार 8. 05 करोड़ टन हैं। भारत में बॉक्साइट उत्पादन में 9.64 लाख टन के साथ चौथा स्थान है।

(5) छत्तीसगढ़ : यह राज्य भारत में बॉक्साइट उत्पादन में 6.18 प्रतिशत (6.40 लाख टन) के साथ पाँचवें स्थान पर है। यहाँ भारत के सर्वाधिक बॉक्साइट खनिज के निक्षेप पाये जाते हैं। यहाँ उत्तम कोटि के 30–35 करोड़ टन भण्डार हैं। सरगुजा, रायगढ़, महासमंर, कोरबा, राजनन्द गाँव तथा विलासपुर प्रमुख उत्पादक जिले हैं। यहाँ धातु की मात्रा 62 प्रतिशत तक है।

(6) तमिलनाडु : यह राज्य भारत में 2.74 प्रतिशत (2.64 लाख टन) बॉक्साइट उत्पादन के साथ छठा स्थान है। यहाँ सलेम, मदुरै, नीलगिरि और कोयम्बटूर जिलों में बॉक्साइट प्राप्त होता है जिसमें बॉक्साइट की मात्रा 45 से 60 प्रतिशत तक पायी जाती है।

(7) मध्य प्रदेश : भारत में 2.35 प्रतिशत (2.30 लाख टन) उत्पादन के साथ सातवाँ स्थान है। शाहडोल, माण्डला, बालाघाट, कटनी, जबलपुर, सिओनी प्रमुख जिले हैं।

(8) कर्नाटक : बेलगाँव, बाबाबूदन की पहाड़ियों और दक्षिणी कनारा जिलों से बॉक्साइट प्राप्त होता है। यहाँ अनुमानित भण्डार 50 लाख टन हैं।

(9) आन्ध्र प्रदेश–तेलगाँना : यहाँ विशाखापट्टनम, विजयनगर, श्रीकाकुकुलम आदि जिलों में बॉक्साइट प्राप्त होता है। अनुमानित नये भण्डार 3.5 करोड़ टन है।

(10) अन्य राज्य : जम्मु के उघमपुर के पुँछ जिलें में एवं गोवा में बॉक्साइट पाया जाता है।

उत्पादन एवं व्यापार

भारत में 62 प्रतिशत बॉक्साइट का उत्पादन उड़ीसा एवं झारखण्ड से ही प्राप्त होता है। भारत में 1947 में केवल दो छोटे एल्यूमिनियम सन्द्रावक थे (अ) अलवाये (केरल), (ब) आसनसोल (पं.बंगाल)। इनकी उत्पादन क्षमता 7000 टन थी। नये संद्रावकों के लगने से भारत की वर्तमान एल्युमिनियम उत्पादन क्षमता 6.40 लाख टन हो गई। भारत में बॉक्साइट का उत्पादन 2001–02 में 85.85 लाख टन से बढ़कर 2005–06 में 123.35 लाख टन तथा 2013–14 में 217 लाख टन हो गया है। इसलिए भारत अब यूरोपीय देशों और रूस को उत्तम किस्म की अर्द्ध निर्मित धातु एल्यूमिना का 15 से 20 लाख टन निर्यात करने लगा है। बॉक्साइट के उत्पादन का 80 प्रतिशत भाग अकेले एल्यूमिनियम में लिया जाता है।

अभ्रक

अभ्रक आग्नेय एवं कायान्तरित शैलों में सफेद गुलाबी और गहरे हरे रंगों में प्राप्त होता है। यह कुछ लम्बी और 3 सेमी से 1 मीटर मोटी शिराओं में छोटे–छोटे टुकड़ों के रूप में पाया जाता है। अभ्रक नम्य, हल्का, चमकीला, पारदर्शी, परतदार, विद्युतरोधी, कठोर और उच्च द्रवणांक क्षमता वाला होता है। विद्युतरोधी एवं उच्च वॉल्टेज, सहन क्षमता होने से इसका सर्वाधिक उपयोग विद्युत एवं इलेक्ट्रोनिक उद्योगों में होता है। इसके अतिरिक्त औषधि

निर्माण, वायुयान, टेलीफोन, रेडियो, दूरदर्शन मोटर, वायर लेस, सजावट के सामान, चश्में और भट्टियों की ईंटें बनाने में किया जाता है।

प्राप्ति स्थान

(1) आन्ध्र प्रदेश : देश के कुल अभ्रक उत्पादन में राज्य का 72.56 प्रतिशत (883 टन) उत्पादन के साथ प्रथम स्थान है। विशाखापट्टनम्, कृष्णा, पूर्वी और पं. गोदावरी, खम्माम और अनन्तपुर प्रमुख उत्पादक जिले हैं। यहाँ हरे रंग का अभ्रक प्राप्त होता है। नैल्लौर की अभ्रक अपनी गुणवत्ता के लिए विश्व विख्यात है।

(2) राजस्थान : देश के कुल अभ्रक उत्पादन में 15.61 प्रतिशत (190 टन) योगदान के साथ दूसरे स्थान पर है। भीलवाड़ा, उदयपुर, अजमेर, राजसमन्द मुख्य उत्पादक जिले हैं। कुछ अभ्रक टोंक, अलवर, भरतपुर, डूंगरपुर आदि जिलों से भी प्राप्त होता है। राजस्थान में उत्तम किस्म का हल्के हरे व गुलाबी रंग का अभ्रक प्राप्त होता है।

(3) झारखण्ड व बिहार : देश के उत्पादन में 11.83 प्रतिशत (144 टन) के साथ तीसरा स्थान है। हजारी बाग, गया, कोडरमा, भागलपुर, मुंगेर, संथाल, परगना प्रमुख उत्पादक जिले हैं। यहाँ हल्के लाल रंग वाला उत्तम किस्म का अभ्रक निकाला जाता है जिसे बंगाल मणिक कहा जाता है। कुछ अभ्रक सिंहभूमि और पालामऊ जिलों में भी निकाला जाता है।

(4) तमिलनाडु : यहाँ तिरूनलवेली, कोयम्बटूर, तिरूचरापल्ली और मदुरै प्रमुख उत्पादक जिले हैं।

(5) अन्य राज्य : केरल में नय्यूर, पुन्नालूर, अलप्पी और क्विलोन उड़ीसा में ढ़ेकनाल, सम्बलपुर, कोरापुट, कटक, गंजाम, कर्नाटक में हसन और मैसूर, छत्तीसगढ़ के बस्तर, पं. बंगाल में बाँकुड़ा और मिदनापुर तथा हरियाणा में गुडगाँव जिले में अभ्रक निकाला जाता है।

उत्पादन एवं व्यापार

भारत में विश्व का 80 प्रतिशत अभ्रक निकाला जाता है। इसलिए अभ्रक उत्पादन में भारत का एकाधिकार है। विद्युत उद्योगों में अभ्रक के प्रतिस्थापक के रूप में प्लास्टिक जैसे पदार्थों का उपयोग बढ़ने से विश्व स्तर पर इसकी माँग में कमी से उत्पादन में कमी आई है। 2003–04 में 1217 टन, 2007–08 में 1300 टन, 2013–14 में 1610 टन अभ्रक का उत्पादन हुआ।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. भारत में पशु संसाधन का उपयोग विविध कृषि कार्यों और यातायात के साधन के रूप में किया जाता है।
2. पशुओं से दूध, दूध से पनीर, खोया (मावा), दही, मक्खन, घी, छाछ, आदि पौष्टिक पदार्थ एवं माँस, ऊन आदि पदार्थ प्राप्त होते हैं।
3. पशुओं से खालें व चमड़ा प्राप्त होता है। इनसे गोबर, खून एवं हड्डी से खाद बनाई जाती है।
4. भारत में विश्व का 20 प्रतिशत पशुधन पाया जाता है।
5. भारत में पौष्टिक आहार व हरे चारे की कमी, उत्तम पशुधन का अभाव, पशुओं की मारियाँ, पशुपालकों की लापरवाही व अज्ञानता के कारण पशु संसाधन की स्थिति कमजोर है।
6. भारतीय राष्ट्रीय आय का 2 प्रतिशत वनों से प्राप्त होता है।
7. भारत में 1952 की वन नीति के अनुसार 33% भाग पर वन होने चाहिए किन्तु अथक प्रयासों के बाद भी 2001 में 19. 49% से बढ़कर 2011 में 21.34% भाग पर ही वन क्षेत्र का फैलाव हो सका है।
8. कृषि हेतु भूमि की माँग के निरन्तर वृद्धि, तीव्र औद्योगिकरण एवं शहरीकरण, घरेलू आवश्यकताओं के लिए वनों की कटाई, अनियंत्रित चराई, घरेलू आवश्यकताओं के लिए वनों की कटाई, स्थानान्तरित कृषि प्रणाली, बढ़ता खनन क्षेत्र बड़ी व बहुउद्देशीय योजना आदि जैसे कारक भारत में घटते वन क्षेत्र के लिए उत्तरदायी है।
10. भारतीय वनों से कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ है।
11. वनों की मुख्य उपजों में विभिन्न प्रकार की लकड़ियाँ और गौण उपजों में लाख, कत्था, गोंद, कच, घाँसे, चमड़ा रंगने व कमाने के पदार्थ, फल, शहद, मोम, जड़ी–बूटियाँ, महुआ, बेंत, बाँस व तुंग आदि।
12. भारत में मत्स्य व्यवसाय में 1.14 करोड़ लोगों को रोजगार मिल हुआ हैं।
13. मत्स्य प्राप्ति हेतु छिछले समुद्र, नदियों के मुहानें, ठण्डी व गर्म जलधाराओं के मिलन स्थल एवं शीतोष्ण जलवायु आदि उत्तम अनुकूल दशाएँ हैं।
14. भारत में मत्स्य प्राप्ति के तीन प्रमुख क्षेत्र है– समुद्र तटीय क्षेत्र, नदीमुख मत्स्य क्षेत्र एवं अन्तर्राष्ट्रीय मीठे जल के क्षेत्र।
15. भारत में वर्षा का 90 प्रतिशत भाग दक्षिणी पश्चिमी मानसून द्वारा ग्रीष्म ऋतु में प्राप्त होता है।
16. भारत में वर्षण से 4000 घन किमी जल प्राप्त होता है।
17. भारत में वर्षा का वार्षिक औसत लगभग 108 सेमी है।
18. वर्षा की कमी या अभाव के कारण शुष्क मौसम में खेतों को

कृत्रिम ढंग से जल पिलाने की क्रिया को सिंचाई कहते हैं।

19. भारत में नलकूप, नहरें, कुएँ, तालाब और बाँध सिंचाई के प्रमुख साधन है।
20. वे सभी प्राकृतिक पदार्थ जो भूमि से खोदकर निकाले जाते हैं। खनिज संसाधन कहलाते हैं।
21. भारत में प्रमुख छः मेखलाओं में खनिज पाये जाते हैं।
22. भारत में 2014–15 में 17.80 खरब रूपये के खनिजों का निर्यात किया गया।
23. कुल निर्यात में खनिजों का योगदान 9.4 प्रतिशत है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक

1. गाय पालन में विश्व में भारत का कौनसा स्थान है?
   (अ) दूसरा (ब) पहला
   (स) तीसरा (द) चौथा
2. भारत में विश्व की कितने प्रतिशत भैंसे पाली जाती है?
   (अ) 40 प्रतिशत (ब) 56 प्रतिशत
   (स) 48 प्रतिशत (द) 42 प्रतिशत
3. भारत में सर्वाधिक ऊँट कौनसे राज्य में पाले जाते हैं।
   (अ) गुजरात (ब) पंजाब
   (स) हरियाणा (द) राजस्थान
4. भारत में वनों का विस्तार कितने भौगोलिक क्षेत्र पर है–
   (अ) 22 प्रतिशत (ब) 21.05 प्रतिशत
   (स) 14 प्रतिशत (स) 19 प्रतिशत
5. वनों के अन्तर्गत सर्वाधिक प्रतिशत भूमि किस राज्य में है–
   (अ) मिजोरम (ब) मेघालस
   (स) अरूणाचल प्रदेश (द) हिमाचल प्रदेश
6. 50 सेमी से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में पाये जाने वाले वन है–
   (अ) शुष्क (ब) मरूस्थलीय
   (स) मानसूनी (द) सदाबहार
7. पश्चिमी घाट पर पाई जाने वाली वनस्पति का प्रकार है–
   (अ) सदाहरित (ब) अल्पाइन
   (स) सवाना (द) पर्णपाती
8. उष्णकटिबंधीय आर्द्र सहाबहार वन पाए जाते हैं–
   (अ) अरावली पर्वतमाला (ब) शिलांग पठार पर
   (स) प्रायद्वीपीय पठार पर (द) शिवालिक श्रेणी पर
9. आयस्टर कलचर का विकास किया जा रहा है–
   (अ) सौराष्ट्र तट पर (ब) मुम्बई तट पर
   (स) कोचीन तट पर (द) चेन्नई तट पर
10. भारत की सबसे लम्बी नदी है–
    (अ) ब्रह्मपुत्र (ब) गंगा
    (स) यमुना (द) कृष्णा
11. धरातलीय जल का सर्वाधिक उपयोग किस क्षेत्र में होता है।
    (अ) कृषि (ब) उद्योग
    (स) घरेलू (द) अन्स
12. नीरू–मीरू कार्यक्रम चलाया जा रहा है–
    (अ) राजस्थान (ब) आन्ध्र प्रदेश
    (स) गुजरात (द) कर्नाटक
13. ताँबा का उत्पादन होता है–
    (अ) राजस्थान तथा बिहार
    (ब) उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान
    (स) बिहार, उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान
    (द) ओडिशा, राजस्थान, बिहार एवं उत्तर प्रदेश
14. भारत के कर्नाटक राज्य में स्थित बाबाबूदान की पहाड़ियों से कौनसा खनिज पदार्थ निकाला जाता है–
    (अ) लौह–अयस्क (ब) मैंगनीज
    (स) निकेल (द) पेट्रोलियम
15. भारत में अभ्रक का सर्वाधिक उत्पादन करने वाला राज्य कौनसा है–
    (अ) आन्ध्र प्रदेश (ब) बिहार
    (स) झारखण्ड (द) राजस्थान
16. भारत में अभ्रक खनन का केन्द्र है–
    (अ) खेतड़ी (ब) कोडरमा
    (स) कालाहांडी (द) गुरूमहिसानी
17. वैलाडीला में पाया जाने वाला लौह–अयस्क प्रायः है–
    (अ) हैमेटाइट (ब) सिडेराइट
    (स) लिमोनाइट (द) मैग्नेटाइट
18. भारत में सर्वाधिक लौह–अयस्क किस राज्य में मिलता है–

(अ) गोआ (ब) छत्तीसगढ़

(स) ओडिशा (द) मध्य प्रदेश

19. बाल्को किस खनिज उत्पादन से सम्बन्धित है–

(अ) एल्युमिनियम (ब) सोना

(स) ताम्बा (द) जस्ता

20. ताँबा उत्पादन में अग्रणी राज्य है–

(अ) झारखण्ड (ब) राजस्थान

(स) मध्य प्रदेश (द) कर्नाटक

21. निम्नांकित में से बॉक्साइड की प्रमुख खदान है–

(अ) जावर (ब) खेतड़ी

(स) लोहारदगा (द) कलोल

अतिलघूत्तरात्मक

22. भारत में विश्व का कितने प्रतिशत पशुधन पाया जाता हैं?

23. ऊन व माँस के लिए कौनसा पशु पाला जाता है।

24. मानसूनी वनों की सबसे महत्त्वपूर्ण इमारती लकड़ी का नाम बताइये।

25. मत्स्य व्यवसाय से भारत में कितने व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ हैं?

26. भारत में वर्तमान में कितने प्रतिशत भाग पर वन पाये जाते हें।

28. भारत में मछली पकड़ने के प्रमुख क्षेत्र कौन–कौनसे हैं।

29. भारत में वर्षा का वार्षिक औसत कितने सेमी हैं?

30. भारत में सिंचाई के प्रमुख साधन कौन–2 से हैं?

31. खनिज से क्या अभिप्राय हैं?

लघूत्तरात्मक

32. ऊँट को रेगिस्तान का जहाज क्यों कहा जाता हैं?

33. भारत में पाये जाने वाले प्रमुख पालतू पशुओं के नाम लिखिए।

34. भारत में पशु संसाधन का क्या महत्त्व हैं?

35. अधात्विक खनिज से क्या अभिप्राय हैं?

36. भारत में प्रमुख सिंचाई के साधनों का वर्णन कीजिए।

37. भारत में ताम्बा उत्पादन क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक

38. भारत में पशुओं से प्राप्त होने वाले पदार्थों का वर्णन करते हुए इनकी कमजोर स्थिति के कारणों का वर्णन कीजिए?

39. भारत में घटते वन क्षेत्र के कारणों का उल्लेख करते हुए वन विनाश से होने वाली हानियों का वर्णन कीजिए।

40. भारत में वन संसाधन का महत्त्व स्पष्ट करते हुए वन संसाधन के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

41. भारत के मत्स्य संसाधन पर एक लेख लिखिए।

42. भारत में जल संसाधन की उपलब्धता एवं उपयोग पर लेख लिखिए।

43. आधुनिक युग में लोहे का क्या महत्त्व हैं। भारत में लोहे के वितरण, उत्पादन एवं व्यापार का सचित्र वर्णन कीजिए।

44. एल्युमिनियम की उपयोगिता स्पष्ट करते हुए भारत में बॉक्साइट के वितरण एवं व्यापार का सचित्र वर्णन कीजिए।

पाठ 17

ऊर्जा संसाधन

(Energy Resources)

ऊर्जा संसाधन

ऊर्जा (शक्ति) संसाधन किसी देश के सर्वांगीण विकास की महत्त्वपूर्ण कड़ी होते हैं। मानव सभ्यता और उसका आर्थिक विकास ऊर्जा संसाधनों के उपयोग से जुड़ा हुआ है। किसी भी देश के औद्योगिक विकास हेतु ऊर्जा या शक्ति के संसाधन एक आवश्यक तत्त्व है। आधुनिक औद्योगिक युग में शक्ति के साधन ही किसी भी देश की आर्थिक प्रगति का सूचक और आधार है। ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों को रेखाचित्र संख्या 17.1 में प्रदर्शित किया गया है।

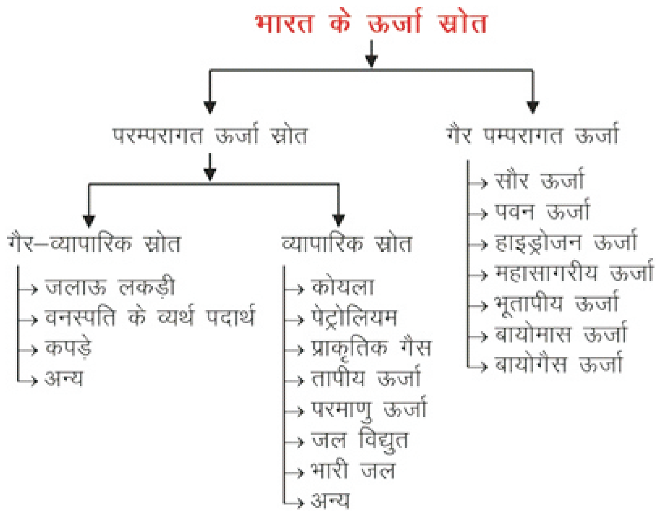

रेखाचित्र 17.1 : भारत के ऊर्जा स्रोत

भारत में ऊर्जा संसाधनों की स्थिति कई हद तक संतोषप्रद नहीं है। भारत में परम्परागत ऊर्जा स्रोतों में कोयला, पेट्रोल, प्राकृतिक गैस, ताप ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा और जल विद्युत का प्रयोग किया जाता है। औद्योगिक विकास और उनके संचालन के लिये विद्युत एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। देश में अधिकाँश विद्युत शक्ति का उत्पादन आज भी परम्परागत ऊर्जा के संसाधनों के आधार पर किया जा रहा है। वर्ष 2011 में उत्पादित विद्युत शक्ति का 64.08 प्रतिशत तापीय विद्युत (कोयला), 32.24 प्रतिशत जल विद्युत व 3. 68 प्रतिशत अणु शक्ति से प्राप्त हुआ है। कोयला आज भी तापीय विद्युत का सबसे बड़ा साधन है। इस अध्याय में हम कुछ महत्त्वपूर्ण ऊर्जा संसाधनों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

कोयला

ब्रिटेन में हुई औद्योगिक क्रान्ति के आधार कोयले को उद्योगों की जननी, काला सोना और शक्ति का प्रतीक कहा जाता है। देश में आज भी कोयला शक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है। विश्व में आधुनिक औद्योगिकरण का सूत्रपात करने का श्रेय कोयले को ही है।

भारत में कोयले का उपयोग प्राचीनकाल से होता आया है, परन्तु वर्तमान कोयला खनन उद्योग का विकास 1774 में आरम्भ हुआ, जब अंग्रेजों द्वारा रानीगंज में कोयले का पता लगाया गया। भारत विश्व में कोयला उत्पादन की दृष्टि से चीन व अमेरिका के

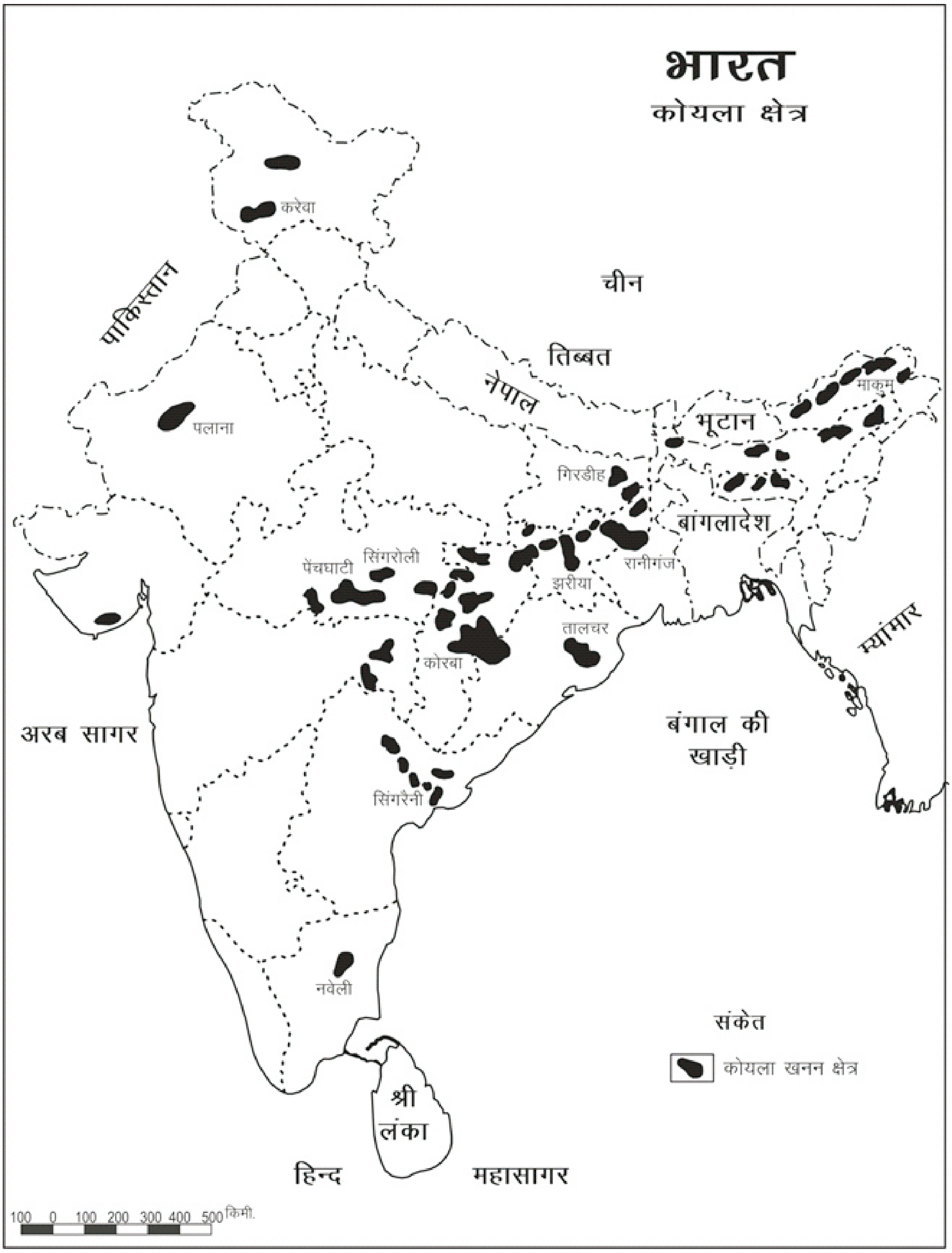

मानचित्र 17.1 : भारत में कोयला क्षेत्र

बाद तीसरे स्थान पर है। भारत विश्व का 4.7 प्रतिशत कोयला उत्पादित करता है। भारत की ऊर्जा का लगभग 60.0 प्रतिशत भाग कोयले से प्राप्त होता है।

कार्बन की मात्रा के आधार पर विश्व स्तर पर कोयले को चार प्रकारों में विभाजित किया जाता है।

(1) एन्थ्रेसाइट : कार्बन की मात्रा 80 से 90 प्रतिशत तक।

(2) बिटुमिनस : कार्बन की मात्रा 75 से 80 प्रतिशत तक।

(3) लिग्नाइट : कार्बन की मात्रा 50 प्रतिशत तक।

(4) पीट : कार्बन की मात्रा 50 प्रतिशत से कम।

कोयला उत्पादन क्षेत्र

भारत में उपलब्ध कोयला दो भू–वैज्ञानिक काल खण्डों

(अ) गौंडवाना युगीन, (ब) टर्शयरी काल से सम्बन्धित है।

(अ) गौंडवाना युगीन : उत्पादन व उपभोग की दृष्टि से गौंडवाना युगीन कोयले का सर्वाधिक महत्त्व है। भारत वर्ष में इस प्रकार का कोयला विभिन्न नदियों की घाटियों में पाया जाता है।

(i) गोदावरी घाटी क्षेत्र : आन्ध्र प्रदेश राज्य में विस्तृत गोदावरी नदी की घाटी में देश के लगभग 7.5 प्रतिशत कोयले के भण्डार हैं। आदिलाबाद, करीमनगर, खम्माम, वारंगल और पश्चिमी गोदावरी मुख्य उत्पादक जिले हैं। गोदावरी और तन्दूर नदियों के बीच के 250 वर्ग किमी क्षेत्र में प्रसिद्ध कोयला क्षेत्र फैला हुआ है। राज्य में सिंगरेनी कोयले का बड़ा उत्पादक क्षेत्र है। यहाँ बाराकर श्रेणी की चट्टानें 54 वर्ग किमी में फैली हुई है। यहाँ कोयले की परतें दो मीटर से भी अधिक मोटी है। आन्ध्र प्रदेश का वार्षिक कोयला उत्पादन 332 लाख टन है।

(ii) महानदी घाटी क्षेत्र : उड़ीसा राज्य में देश के लगभग 25 प्रतिशत कोयले के भण्डार मिलते हैं। कुल उत्पादन का 15.3 प्रतिशत भाग यहाँ से प्राप्त होता है। राज्य में ढेंकनाल जिले में तालचर कोयला क्षेत्र 548 वर्ग किमी में फैला है। यहाँ का कोयला विद्युत उत्पादन, उर्वरक तथा गैस उत्पादन में प्रयुक्त होता है। उड़ीसा प्रतिवर्ष 523 लाख टन कोयले का उत्पादन करता है।

(iii) दामोदर घाटी क्षेत्र : देश का सबसे बड़ा कोयला उत्पादक क्षेत्र है। यहाँ से देश का 50 प्रतिशत से भी अधिक कोयला प्राप्त होता है। यह झारखण्ड एवं पश्चिमी बंगाल राज्य में फैला हुआ है। पश्चिमी बंगाल के बर्दवान, बाकुडा और पुरूलिया जिलों में विस्तृत रानीगंज कोयला क्षेत्र (1092 वर्ग किमी) भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण और बड़ा उत्पादक क्षेत्र है। अकेले इस क्षेत्र से देश का 29 प्रतिशत कोयला प्राप्त होता है। झारखण्ड में झरिया सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है जो 436 वर्ग किमी. में फैला है। यहाँ उत्तम किस्म के बिटुमिनस कोयले के भण्डार है। हजारीबाग, बोकारो, गिरडीह, उत्तरी व दक्षिणी करणपुर और रामगढ़ प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्र है।

(iv) पश्चिमी दामोदर घाटी क्षेत्र : यह झारखण्ड राज्य के पलामू जिले में फैला हुआ है। यहाँ पर औंरगा (240 वर्ग किमी.), डाल्टनगंज (80 वर्ग किमी.) एवं हुतार प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्र है। इसी घाटी में राजमहल पहाड़ियों के पश्चिम में राजमहल कोयला क्षेत्र 182 वर्ग किमी. में फैला हुआ है।

(v) सोन नदी घाटी क्षेत्र : इस क्षेत्र के अन्तर्गत मध्य प्रदेश के उमरिया, सोहागपुर और सिंगरोली कोयला क्षेत्र सम्मिलित होते हैं। राज्य के शहडोल व सिधी जिलों में स्थित सिंगरोली 2037 वर्ग किमी. में फैला मुख्य कोयला उत्पादक क्षेत्र है।

(vi) छत्तीसगढ़ कोयला क्षेत्र : कोयले के उत्पादन में इसका तीसरा स्थान है। यहाँ पर 16 प्रतिशत कोयले का उत्पादन होता है। प्रमुख कोयला क्षेत्रों में रामकोला, तातापानी, कोरबा, झिलमिल, विश्रामपुर, लखनपुर, चीरीमिरी मुख्य क्षेत्र है। रामकोला, तातापानी क्षेत्र 250 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैला है। हालाँकि यहाँ का कोयला घटिया किस्म का है। कोरबा क्षेत्र के निकट विलासपुर में 515 वर्ग किमी. क्षेत्र में कोयले के भण्डार है। यहाँ पर कोयले की खानें महानदी व उसकी सहायक अहराम व बुरॉग नदियों के आर–पार फैली हुई है।

(vii) सतपुड़ा कोयला क्षेत्र : नर्मदा नदी की घाटी के दक्षिण में सतपुड़ा के उत्तरी ढालों के तल में नरसिंहपुर जिले में मोहपानी कोयला क्षेत्र स्थित है। यहाँ 4 करोड़ टन कोयले के भण्डार अनुमानित किये गये हैं। इसी के निकट कान्हन घाटी क्षेत्र में 7 करोड़ टन कोयले के भण्डार है। मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के अधिकाँश कोयला क्षेत्र इसी सतपुड़ा में फैले हैं। बेतुल जिले में भी पाथरखेड़ा कोयला क्षेत्र का कोयला यहीं के तापीय विद्युत गृह में काम में आता है।

(viii) महाराष्ट्र–वर्धा घाटी : महाराष्ट्र के इस क्षेत्र के अन्तर्गत चन्द्रपुर, वल्लारपुर, यवतमाल, बरोरा और नागपुर के कोयला क्षेत्र सम्मिलित होते हैं। यहाँ देश के कुल कोयला भण्डारों का 3 प्रतिशत है, कुल भण्डार 50 करोड़ टन कोयले के आकंलित किये गये हैं। यहाँ का कोयला हल्की किस्म और चूरे के रूप में मिलता है। इसका प्रयोग ताप विद्युत गृहों में ही किया जा रहा है।

(ix) पश्चिमी बंगाल : राज्य में वर्धमान, बाकुडा, पुरूलिया, वीरभूम, दार्जलिंग और जलपाईगुड़ी में देश के 11 प्रतिशत कोयले के भण्डार है। पश्चिमी बंगाल देश का 6 प्रतिशत कोयला उत्पादित करता है।

(ब) टर्शयरी काल : भारत का 2 प्रतिशत कोयला टर्शयरी काल की एवं मेसोजाइक काल की चट्टानों में प्राप्त होता है। इस प्रकार के कोयले के 225 करोड़ टन के भण्डार आंकलित किये गये हैं। इन श्रेणी के कोयले के प्राप्ति के मुख्य क्षेत्रों में असम, मेघालय, जम्मू–कश्मीर, तमिलनाडू, राजस्थान, अरूणाचल प्रदेश और पश्चिमी बंगाल राज्य है।

पश्चिमी बंगाल में पनकाबाड़ी प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्र है, यहाँ का कोयला बनावट में गौंडवाना युगीन कोयले से मिलता है। अरूणाचल प्रदेश में डफाला पहाड़ियों में डीगरॉक प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्र है। असम राज्य में लखीमपुर, शिवसागर जिलों में माकूम क्षेत्र 80 किमी लम्बाई में फैला है। यहाँ का कोयला

गैस बनाने के लिये अधिक उपयोगी है। मेघालय राज्य में गारोखासी जयन्तियां पहाड़ियों में टर्शयरी काल के कोयले के भण्डार है।

(स) लिगनाइट कोयला : हालांकि कार्बन की मात्रा के अनुसार लिगनाइट कोयला घटिया माना जाता है परन्तु ताप विद्युत की दृष्टि से यह कोयला भी महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार के कोयले के भण्डार तमिलनाडु में तिरूवनालोर व वेल्लोर जिले में फैला नवेली लिगनाइट कोयला भण्डार प्रसिद्ध है। जहाँ 330 करोड़ टन लिगनाइट कोयले के भण्डार है। यहाँ पर 1956 से नवेली लिगनाइट लिमिटेड द्वारा कोयला खनन किया जा रहा है।

राजस्थान के बीकानेर जिले में पलाना नामक स्थान पर लिगनाइट किस्म का कोयला मिलता है। यह तीन वर्ग किमी क्षेत्र में फैला कोयला उत्पादन का क्षेत्र है जहाँ 50 प्रतिशत की कार्बन मात्रा वाला कोयला उपलब्ध है। यह कोयला रेलों के लिये उपयोगी है।

बाड़मेर जिले में भी वर्ष 2003 में लिगनाइट के भण्डारों का पता लगा है। यहाँ पर बीकानेर में स्थित तापीय विद्युत गृह में इस कोयले का प्रयोग किया जाता है।

(द) अन्य : देश में कोयले के कई अन्य उत्पादक क्षेत्रों में पाण्डीचेरी, गुजरात के कच्छ, जम्मू कश्मीर के पूँछ, रियासी और उधमपुर जिलों में तथा उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्रों में भी कोयला खनन किया जा रहा है।

देश में कोयला के उत्पादन को राज्य अनुसार सारणी 17.1 में दर्शाया गया है।

व्यापार

घरेलू माँग की पूर्ति के बाद भारत द्वारा कोयले का निर्यात अपने पड़ौसी देशों बाँग्लादेश, नेपाल, भूटान, म्यांनमार एवं श्रीलंका को किया जाता है। वर्ष 2010 में 521 करोड़ रूपये के कोयले का निर्यात किया गया। भारत में उच्च कोटि का कोकिंग कोयला आस्ट्रेलिया, कनाड़ा व अन्य यूरोपीय देशों से आयात किया जाता है। वर्ष 2012– 13 में 83,998.35 करोड़ रूपये के कोयले का आयात किया गया है।

सारणी 17.1 : भारत में कोयला भण्डार व उत्पादन 2012–13

क्र.सं.	राज्य	प्रमाणित भण्डार (%)	कुल भण्डार (%)	उत्पादन (%)	प्रमुख क्षेत्र
1	मध्यप्रदेश	6.35	7.77	13.80	शहडोल, छिंदवाड़ा, सीधी, नरसिंहपुरा, बेंतुल
2	छत्तीसगढ़	11.48	16.31	17.03	सरगुजा, बिलासपुर, रामगढ़, कोरबा, विश्रामपुर, बस्तर
3	झारखण्ड	36.85	28.08	22.03	झारिया उत्तरी व दक्षिणी करणपुरा, पश्चिम व पूर्वी बोकारो, राजमहल, रामगढ़, देवगढ़, हुतार, औरंगा, डाल्टनगंज
4	आन्ध्रप्रदेश–तेलंगाना	8.74	6.75	9.37	खम्मान, आदिलाबाद, वारंगल, तन्दूर, सिंगरेनी, कलापल्ली, सस्सी
5	महाराष्ट्र	4.84	3.57	9.11	चन्द्रपुर (वर्धा घाटी), कम्पटी (नागपुर), यवतमाल (बल्लाखूर)
6	पश्चिम बंगाल	11.84	10.94	6.00	रानीगंज, वर्धमान, बाकुण्डा, पुरूलिया, वीरभूम, दार्जिलिंग, न्यूजलपाईगुड़ी
7	उड़ीसा	17.59	24.39	16.63	ढेंकानल, सम्बलपुर, तालचर, सुन्दरगढ़, इब नदी घाटी, ब्राह्मणी नदी घाटी
8	उत्तर प्रदेश	0.80	0.42	0.15	सोनभद्र
9	पूर्वी राज्य	0.15	0.23	0.10	मेघालय, अरूणाचल प्रदेश, नागौलण्ड
10	अन्य राज्य	1.36	1.54	5.78	
	गोंडवाना कोयला	99.73	99.68	93.56	उपरोक्त सभी राज्य
	टरशियरी कोयला	0.27	0.34	6.87	असोम (माकूम, नजीरा), पलाना (राजस्थान), नवेली (तमिलनाडु)

Source : Statistical Abstract India, 2014